Aman Builder & Developer

[redacted]

Aman Builder & Developer in Vasco Da Gama, Goa

Having solid experience in the real estate market, Aman Builder & Developer in Vasco Da Gama presents a wide choice of residential, industrial, commercial, recreational and institutional properties to its clients. Distinguished for their award-winning projects, this real estate group is truly one of the most established and recognized ones in the housing and construction sector. Creating unique and innovative spaces ever since established, the company has been able to build a strong foundation over the passage of time. The builder has constantly strived to exceed the expectations of its clients through quality work, transparent work ethics and use of cutting-edge technology. The organization is committed to provide an enhanced living experience to the residents through constant innovation and creative delivery of projects. The office is situated on , Near Ktc Bus Stand,Vasco Da Gama, which is easily accessible from any part of the city.



Shop No 3/4,G.F. 1st Floor, Karma Empress Building,
Vasco Da Gama, Goa - 403802

www.kanti.in

संपादक
शिब्ली अरसलान
editorkantimasik@gmail.com

कार्यकारी प्रबंधक
नईम ख़ान
+91 9891160829

सहयोग राशि
एक प्रति 25/- रु॰ वार्षिक 270/- रु॰
दो वर्ष 500/- रु॰ पांच वर्ष 1100/- रु॰
आजीवन रु॰ 6000/-
सऊदी अरब और खाड़ी के देशों के लिए 110/- रियाल
यूरोप व अमेरिका के लिए 40/- US डॉलर

ख़रीदार बनने, एजेंसी लेने, प्रचार-प्रसार एवं प्रबंधकीय मामलों के लिए सम्पर्क करें :

कार्यालय :
कान्ति मासिक, डी-314, दावत नगर,
अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव, जामिया नगर,
ओखला, नई दिल्ली-110025

हेल्पलाइन न॰
+91 8920589292

Account Detail
NAME : KANTI
A/C NO : 0990839195
IFS CODE : IDIB000J029
TYPE : CURRENT
BANK : INDIAN BANK
BRANCH : JAMIA MILLIA ISLAMIA
NEW DELHI - 110025

चेक / ड्राफ्ट 'कान्ति' के नाम से बनवाएं

मुद्रक एवं प्रकाशक मुहम्मद अहमद द्वारा दावत ट्रस्ट (रजि॰), डी-314 दावत नगर, अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव, जामिया नगर, नई दिल्ली-110025 से प्रकाशित एवं भारत ऑफ़सेट प्रेस, 2035, क़ासिम जान स्ट्रीट, बल्लीमारान, दिल्ली - 110006 से मुद्रित।
फ़ोन: 9818799223
संपादक: शिब्ली अरसलान

संस्था की लिखित अनुमति के बिना सम्पूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित है।

वर्ष 31 अंक 02 अगस्त 2021

आपकी आशाओं का सुन्दर प्रतिबिम्ब

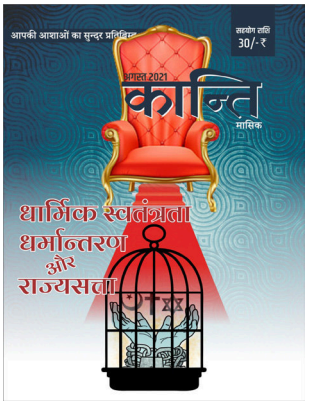

कान्ति
मासिक

इस अंक में

मूल प्रश्न 04
आधुनिक दुनिया में व्यक्तिगत स्वतंत्रता : नारा बनाम वास्तविकता
शिब्ली अरसलान

चिंतन 07
मानव एकता की बुनियाद क्या हो?
मुत्तलिब मिर्ज़ा

संवेदना 09
संवेदनशून्यता मानवता के लिए अभिशाप
यावर रहमान

मुख्य स्तंभ 13-26
❖धार्मिक स्वतंत्रता, धर्मान्तरण और राज्य
डॉक्टर नफ़ीस अख़्तर
❖बलात् धर्म परिवर्तन : कितना सच, कितना काल्पनिक
वारिस हुसैन
❖धर्मांतरण रोधी क़ानून, धर्मनिरपेक्षता और निजता के संवैधानिक अधिकार का...
फ़ैज़ान मुस्तफ़ा
❖दुष्प्रचार के ज़रिये धार्मिक आज़ादी...
मुहम्मद यूसुफ़ 'मुन्ना'

ज्वलंत 27
मज़बूत फैमिली सिस्टम : मुस्लिम समाज की बड़ी ताक़त
मुहम्मद इक़बाल

इतिहास के झरोखे से 29
अफ़ग़ानिस्तान : अंतहीन वैश्विक साम्राज्यों का शमशान
अशफ़ाक़ ख़ान

न्याय 33
आदिवासी अधिकारों के लिए लड़ने वाले बुज़ुर्ग स्टैन स्वामी की मौत पर विमर्श
मसीहुज़्ज़मा अंसारी

नारी विमर्श 37
महिला अधिकारों के लिए संघर्ष और धैर्य की मिसाल मरवा कवाकचे
हुमा मसीह

संस्मरण 39
पढ़ने-लिखने के वे ज़माने
बिपिन कुमार शर्मा

अध्ययन चर्चा 43
वैधानिक गलप या भारतीय यथार्थ
ख़ान इक़बाल

आख़िरी पन्ना 47
ईश्वर का अंतिम उपदेश : एक साहित्यिक एवं दार्शनिक चमत्कार
बशर करीम

मूल प्रश्न



आधुनिक दुनिया में व्यक्तिगत स्वतंत्रता : नारा बनाम वास्तविकता



शिब्ली अरसलान

वर्तमान युग की सबसे बड़ी विडम्बना ये है कि व्यक्तिगत स्वतंत्रता (Individual liberty) के गगनभेदी नारों के बीच सबसे अधिक व्यक्तिगत स्वतंत्रता ही पर कुठाराघात हो रहा है। आधुनिक लोकतंत्र और उदारवाद का दुनिया भर में ढोल-नगाड़े के साथ ये प्रचार किया गया था कि इसमें इंसानों की वैयक्तिकता (Individuality) और उसकी स्वतन्त्रता (Liberty) अक्षुण्ण रखी जाएगी, मगर हुआ इसके विपरीत...सबसे अधिक व्यक्तिगत स्वतंत्रता पामाल हो रही है। दुनिया भर में लोकतंत्र के नाम पर हासिल की गई बड़ी-बड़ी राज्यसत्ता, व्यक्ति की स्वतंत्रता पर हमलावर है। लोकतंत्र की स्थापना के नाम पर पश्चिमी दुनिया द्वारा ग़रीब और कमज़ोर मुल्कों ने जो विनाश-लीला देखी है, वह आधुनिक दुनिया की डरावनी काली सच्चाई है। अफ़ग़ानिस्तान, इराक़ जैसे कई देशों के बड़े हिस्से को क़ब्रिस्तान में परिवर्तित कर के नवसाम्राज्यवादी शक्तियां अट्टाहास करती रहीं। इन्हीं पश्चिमी मुल्कों में अश्वेतों के विरुद्ध कैसा हिंसक नस्ली भेदभाव होता रहा, अभी पिछले महीने अमेरिका के ओकलाहोमा शहर में अश्वेतों के विरुद्ध होने वाले सबसे बड़े नरसंहार की 100वीं बरसी मनाई गई है। 'black lives matter' कैप्शन के तहत पश्चिमी दुनिया में लगातार आंदोलन चलता रहता है, पिछले साल एक निहत्थे अश्वेत युवक जॉर्ज फ्लायड की अमेरिकन गोरे पुलिस ऑफ़िसर द्वारा दर्दनाक हत्या का वीडियो दुनिया भर में वायरल हुआ था। दुनिया की बड़ी-बड़ी लोकतांत्रिक सरकारें वैचारिक विरोध और असहमति की आवाज़ (dissent) का जिस शिद्दत से दमन करती हैं, ऐसा संगठित और ख़तरनाक दमन शायद ही इतिहास में कभी हुआ हो। विडम्बना देखिए, ये सब 'स्वतंत्रता' के नारों, घोषणाओं और शिखर सम्मेलनों के साथ-साथ चल रहा है।

पिछले वर्ष G7 के शिखर सम्मेलन के अवसर पर, जिसमें प्रधानमंत्री मोदी भी विशेष अतिथि के तौर पर शामिल थे, ये संयुक्त बयान जारी किया गया था–'हम एक महत्वपूर्ण मोड़ पर हैं, जहां बढ़ते अधिनायकवाद, चुनावी

हस्तक्षेप, भ्रष्टाचार, सूचना के हेरफेर के चलते स्वतंत्रता और लोकतंत्र के लिए ख़तरों का सामना करना पड़ रहा है...' महाकवि अल्लामा इक़बाल ने कहा था–'ये इल्म, हिक्मत, तदबीर, ये हुकूमत पीते हैं लहू, देते हैं तालीम-ए-मसावात।'

2003 में इराक़ वार के दौरान यूएस आर्मी और सीआईए के ऑफ़िसर्स ने इराक़ की अबू-ग़रीब जेल में क़ैदियों को जैसा फिजिकल, सेक्शुअल और मेंटल टॉर्चर किया था, जिसका ख़ुलासा एमनेस्टी इंटरनेशनल और एसोसिएटेड प्रेस की रिपोर्ट में बाद में हुआ, ऐसा शायद ही दुनिया ने कभी सुना और देखा हो। ग्वांतानामो-बे जेल की यातना से कौन वाक़िफ़ नहीं! ग्वांतानामो-बे अमेरिकी सीमा से बाहर एक समुद्री तट है, जिस पर अमेरिका का क़ब्ज़ा है। इस जेल को 11 सितंबर 2001 को अमेरिका पर हुए आतंकवादी हमलों के बाद बनाया गया था।

जॉर्ज बुश जूनियर प्रशासन के दौरान पकड़े गए कथित आतंकवादियों को यहां इसलिए रखा गया, ताकि अमेरिकी क़ानूनों के तहत जिन नागरिक अधिकारों की व्यवस्था है, उसके लाभ से वे वंचित रहें। जो बाइडन प्रशासन की स्पष्ट घोषणा के बावजूद ज़्यादातर पर्यवेक्षकों को इस बात पर भरोसा नहीं है कि इस बार सचमुच ग्वांतानामो-बे स्थित जेल को बंद कर दिया जाएगा। आज़ाद भारत में सत्ता और प्रशासन का व्यक्तिगत स्वतंत्रता के मामले में जो जातिवादी, ग़रीब विरोधी और साम्प्रदायिक चरित्र रहा है, उसका निर्लज्ज प्रदर्शन सारी सरकारों में नज़र आता है।

अमेरिकी प्रशासन के प्रति वफ़ादारी प्रदर्शित करने के लिए भारतीय राज्यसत्ता द्वारा नाइन इलेवन के बाद से कथित 'आतंकवाद के विरुद्ध जंग' के नाम पर अपने ही देश के हज़ारों ग़रीब अल्पसंख्यक नागरिकों को जिस तरह संगीन धाराओं के तहत वर्षों हिरासत में रखकर, उनकी ज़िंदगियों को तबाह किया गया, जिसे 20-20 साल बाद हमारी न्याय व्यवस्था 'बा-इज़्ज़त बरी' कर रही है, अब ओपन सीक्रेट है, मगर खेल जारी है। हाथरस केस से प्रसिद्धि में आए गिरफ़्तार केरल के पत्रकार सिद्दीक़ कप्पन को कोरोना पॉजिटिव होने के बावजूद अस्पताल के बेड से ज़ंजीरों द्वारा बांध कर रखा गया। अभी कुछ दिनों पहले अल-क़ायदा का संदिग्ध आतंकवादी बताकर जिन ग़रीब फटेहाल लोगों को लखनऊ से गिरफ़्तार किया गया है, जिस पर गंभीर सवाल उठ रहे हैं, इस संबंध में स्वयं यूपी के एडीजी लॉ एंड आर्डर ये कह रहे हैं कि अभी विवेचना बाक़ी है, मगर व्यक्तिगत स्वतंत्रता से बेपरवाह बेलगाम प्रशासन और सत्ता ने देश विरोधी साज़िश के तहत संगीन धाराएं लगा दी हैं। व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का बहुत अहम पहलू 'अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता' है, जिसका हाल ये है कि इंटरनेट और सोशल मीडिया पर शिकंजे कसे जा रहे हैं। कई स्वतंत्र ऑडिटर्स द्वारा इकट्ठा किए गए आंकड़ों के मुताबिक़ सिर्फ़ 2019 और 2020 में ही भारत में 13,000 घंटे से अधिक समय तक इंटरनेट बंद रहा और इस दौरान कम से कम 164 बार इंटरनेट बंद किया गया।

साल 2019 में भारत सरकार ने 4,196 घंटों के लिए इंटरनेट बैन किया, जिसके चलते 1.3 अरब डॉलर का आर्थिक प्रभाव पड़ा। साल 2020 में ये आंकड़ा दोगुना हो गया और इस दौरान सरकार ने 8,927 घंटों के लिए इंटरनेट पर पाबंदी लगाई।

ये आंकड़े वैश्विक वर्चुअल प्राइवेट नेटवर्क (वीपीएन) रीव्यू वेबसाइट 'Top10VPN.com' द्वारा इकट्ठा किए गए हैं।

प्रश्न ये है कि आधुनिक दुनिया की इस विडम्बना और लोकतंत्र एवं स्वतंत्रता के ध्वजावाहकों की मुनाफ़िक़त का इलाज क्या है? व्यक्तिगत स्वतंत्रता (Individual liberty) तब तक सुनिश्चित नहीं हो सकती जब तक कि इंसानों के मध्य पैदाइश के आधार पर समानता न हो। जब तक जन्म और रंग व नस्ल के आधार पर भेदभाव बाक़ी रहेगा, व्यक्तिगत स्वतंत्रता महज़ नारा होगी, 'बड़ों' और 'छोटों' के लिए अलग-अलग दंडसंहिता और न्याय के पैमाने होंगे। व्यक्तिगत स्वतंत्रता सेलेक्टिव होगी। मानव इतिहास

व्यक्तिगत स्वतंत्रता (Individual liberty) तब तक सुनिश्चित नहीं हो सकती जब तक कि इंसानों के मध्य पैदाइश के आधार पर समानता न हो। जब तक जन्म और रंग व नस्ल के आधार पर भेदभाव बाक़ी रहेगा, व्यक्तिगत स्वतंत्रता महज़ नारा होगी, 'बड़ों' और 'छोटों' के लिए अलग-अलग दंडसंहिता और न्याय के पैमाने होंगे।

में हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) के यह सुनहरे शब्द आज भी दुनिया के लिए मार्गदर्शक हैं जो आपने क़ुरैश क़बीले की एक औरत की चोरी में संलिप्तता पर हज़रत ओसामा (एक सहाबा) की सिफ़ारिश के जवाब में कहे थे– "तुम से पहले जो क़ौम और समूह गुज़रे वह इसलिए तबाह हुए कि वह कम दर्जे के लोगों को क़ानून के अनुसार सज़ा देते थे और ऊंचे दर्जे के लोगों को छोड़ देते थे, क़सम उस ज़ात की जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है मुहम्मद की बेटी भी ऐसा करती तो उसे नहीं बख़्शा जाता।" यही वजह है कि इस्लाम ने व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता के लिए इंसानों के मध्य खड़ी सारी दीवार गिरा दी। 'ग़ुलामी' (slavery) की सदियों पुरानी मज़बूत सामाजिक व्यवस्था ध्वस्त कर दी, स्वामी और दास बराबर खड़े हो गए, केवल मस्जिद में नमाज़ों के लिए नहीं बल्कि ज़िंदगी के हर मैदान में। ग़ुलाम को आज़ाद करके उसे मानव गरीमा अता करना और अपने बराबर दर्जा देना नेकी और प्रतिष्ठा की बात मानी गई। इसका नतीजा था कि ढेरों ग़ुलाम इस्लामी राजनीतिक व्यवस्था में बड़ी पोस्ट पर स्थापित हुए। इस्लाम व्यक्ति की स्वतंत्रता के संबंध में इतना संवेदनशील है कि वो व्यक्ति की प्रताड़ना और अपमान गवारा नहीं करता। प्रसिद्ध लेखक मुहम्मद सलाहुद्दीन लिखते हैं– "इस्लाम का विचार इस संबंध में ये है कि सज़ा से यथासंभव गुरेज़ किया जाए। कारण और प्रमाण सज़ा के लिए नहीं, छुटकारे के लिए ढूंढें जाएं।" (बुनियादी हुक़ूक़,एमएमआई पब्लिशर्स, दिल्ली) इस्लाम, व्यक्ति के व्यक्तिगत आदर और गरिमा के मामले में मुस्लिम और नॉन-मुस्लिम का कोई अंतर नहीं करता। प्रसिद्ध इस्लामी विचारक डॉक्टर अब्दुल करीम ज़ैदान कहते हैं–"इस संबंध में इस्लामिक ज्यूरिस्ट ने ये सिद्धांत पेश किया है कि नॉन मुस्लिम के हुक़ूक़ वही हैं, जो मुस्लिम के हुक़ूक़ हैं, उनकी ज़िम्मेदारियां और मुस्लिम की ज़िम्मेदारियां एक जैसी हैं।" (Individual and state)

अंत में...

प्रत्येक व्यक्ति परमात्मा की अनुपम कृति है, स्वतंत्रता व्यक्ति का नैसर्गिक अधिकार है और इस प्रकार के नैसर्गिक अधिकार को किसी भी शासन द्वारा छीना नहीं जा सकता है। व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार को मूल अधिकारों में सर्वोच्च अधिकार माना जाता है। क्योंकि स्वतंत्रता ही जीवन है और बग़ैर स्वतंत्रता के जीवन की कल्पना करना कठिन है। आप क्या हैं, यह जानने के लिए आपकी आत्मा पर किसी भी प्रकार का बंधन नहीं होना चाहिए। वास्तव में, आध्यात्मिक सुख की प्राप्ति के लिए भी स्वतंत्र विचारों की बड़ी आवश्यकता रहती है। इसलिए किसी ने सच कहा है कि व्यक्तिगत स्वतंत्रता मोक्ष की प्राप्ति का पहला पड़ाव है। ■■



चिंतन



मुत्तलिब मिर्ज़ा
कोटा, राजस्थान

मानव एकता की बुनियाद क्या हो

इन्सान सदियों से एक सामाजिक व्यवस्था का अंग रहा है, ये सामाजिक व्यवस्था समाज में रहने वाले लोगों के पारस्परिक सहयोग, आपसी सम्बन्ध, उनके रीति-रिवाज, मूल्य और आदर्शों से रचित होती है। सामाजिक व्यवस्था इन्सान के अस्तित्व और उसके आदर्शों व मूल्यों की सुरक्षा के लिए आवश्यक भी है, इन्सान में प्राकृतिक तौर पर अपने मूल्यों व आदर्शों के प्रति संवेदनशील भावनात्मक सम्बन्ध पाया जाता है, वो हर उस चीज़ से भयभीत हो जाता है या दूरी बना लेता है जिससे उसे अपने आदर्शों या मूल्यों पर प्रहार का ख़तरा हो। यह भय कई बार मानव समाज में दूरियों का कारण भी बन जाता है, इसी भावनात्मक सम्बन्ध की आड़ में कई बार "आभासी भय" भी समाज में पैदा कर दिया जाता है।

सामाजिक व्यवस्था में चूंकि आदर्शों और मूल्यों की महत्ता बहुत अधिक है इसलिए यह आवश्यक है कि समाज में लोगों को जोड़ने वाले आदर्श व मूल्य उच्च एवं सच्चे हों। उनमें पवित्रता व सुंदरता हो, बौद्धिकता, व्यापकता, व्यावहारिकता और मानवीय संवेदनाओं पर आधारित रिश्ते हों। न कि अधिकारात्मकता और संकीर्णता के भाव उनमें पाए जाते हों। इतिहास में कई बार जाति, रंग, क्षेत्र और नस्ल के आधार पर समाज की स्थापना के गगनभेदी नारे लगाए गए हैं, काले-गोरों की कशमकश, पहली दुनिया, दूसरी दुनिया और तीसरी दुनिया का अंतर, वर्ण-व्यवस्था, साम्प्रदायिक आधार पर संगठित होने की बातें इत्यादि इसके उदाहरण हैं।

समाज की स्थापना किन बुनियादों पर हो और वो कौन से मूल्य हों जिनके आधार पर मानव समाज को संगठित किया जाए इस संबंध में क़ुरआन लोगों का मार्गदर्शन करता है, कहा गया, "लोगो! अपने पालनहार से डरो जिसने



तुम्हें एक जान से पैदा किया फिर उसी जान से उसका जोड़ा बनाया और फिर उन दोनों से बहुत से मर्द व औरत दुनिया में फैला दिए।" (क़ुरआन-4:1)

क़ुरआन के इस बयान में मानव एकता के सम्बन्ध में बहुत ही बुनियादी बात कही गई है। मानव एकता का सबसे बड़ा आधार जो हर तरह के जातिवाद, रंगभेद, नस्लभेद, क्षेत्रवाद और साम्प्रदायिकता जैसे नकारात्मक कारकों से स्वतंत्र हो यही हो सकता है कि तमाम मानवजाति एक ही मां-बाप की औलाद है और उनका पालनहार एक है। इसके अतिरिक्त पवित्र क़ुरआन में अन्य जगहों पर ये भी बताया कि मानवजाति को एकता की लड़ी में बांधने वाली डोर क्या है, "और अल्लाह की रस्सी को एक साथ मज़बूती से थाम लो, और बिखरो नहीं, और अपने ऊपर अल्लाह का एहसान याद रखो कि तुम एक-दूसरे के दुश्मन थे तो अल्लाह ने तुम्हारे दिलों को आपस में जोड़ दिया और तुम उसकी कृपा से भाई- भाई बन गए और तुम आग के एक गड्ढे के बिल्कुल किनारे पर खड़े थे तो अल्लाह ने तुम्हें उससे बचाया।

इसी तरह अल्लाह तुम्हारे लिए अपनी हिदायत को स्पष्ट करता है ताकि तुम सीधी राह पाओ" (क़ुरआन-3:103), क़ुरआन स्पष्ट रूप से मानव एकता का जो मूलमंत्र देता है उसकी बुनियाद वैचारिक है, ऐसी वैचारिक बुनियाद जो लोगों को मोतियों की तरह एक लड़ी में पिरोती है, वो मूल्य जो लोगों को आपस में जोड़ते हैं, वो किसी गिरोह की दुश्मनी या नफ़रत नहीं, बल्कि आपसी मुहब्बत, हमदर्दी और सहयोग की भावना है। एक उद्देश्यपूर्ण एकता की परिकल्पना क़ुरआन देता है, जिसमें मानवजाति आपस में मिलकर



"एक जिस्म" की मानिंद हो जाती है, ये संगठन किसी तरह के आभासी भय, हीनभावना, नकारात्मक प्रचार या अपनी सुरक्षा के प्रति अनिश्चितता जैसे विचारों से ग्रसित नहीं होता, बल्कि समाज में सकारात्मक और रचनात्मक परिवर्तन की नींव डालता है, ये वो आदर्श व मूल्य हैं जिनके साथ लोगों को एकत्रित किया जाना चाहिए, पवित्र क़ुरआन में उन लोगों के चरित्र का वर्णन भी किया गया है जो अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए जातीय व नस्लीय भेदभाव और नफ़रत को आधार बनाकर लोगों को एकत्रित करते हैं। उनके सम्बन्ध में कहा गया है कि ये "मफ़ादपरस्ती" की बुनियाद पर एक साथ खड़े होते हैं, ये बाहर से तो एक संगठन की शक्ल में नज़र आते हैं, लेकिन अंदर से खोखले होते हैं, उनके दिल फटे होते हैं, चेहरों पर दिखावटी मुस्कुराहट की लकीरें खिंची होती हैं, लेकिन दिलों के दरमियान नफ़रतों से अटी गहरी खाइयां होती हैं।

मानव समाज के वे लोग जो समाज में शांति व न्याय की स्थापना का सपना अपनी आंखों में संजोते हैं, उन्हें अपने आस-पास "एकता" के लिए उठने वाले हर स्वर को ग़ौर से सुनना चाहिए, उसके तत्वों का विश्लेषण करना चाहिए, देखना चाहिए कि किन मूल्यों व किन बुनियादों पर वो मानव एकता की इमारत खड़ी करना चाहते हैं? ये इसलिए आवश्यक है कि हम समाज की सही दिशा व दशा को सुनिश्चित कर सकें। ये मनुष्यों का चरित्र नहीं है कि वो किसी भी हांकने वाले के पीछे चल पड़े, बल्कि वो अपने विवेक और बुद्धि से सही ग़लत को परख कर अपने लिए मार्ग का चयन करे। किसी संप्रदाय, धर्म या देश से नफ़रत या दुश्मनी के आधार पर बनने वाली एकता कैसे टिकाऊ, स्थिर और लंबे समय तक चलने वाली हो सकती है। जब आधार ही कमज़ोर हो तो उस पर बनने वाली इमारत कैसे मज़बूत हो सकती है। ■■

संवेदना

यावर रहमान
दिल्ली

संवेदनशून्यता मानवता के लिए

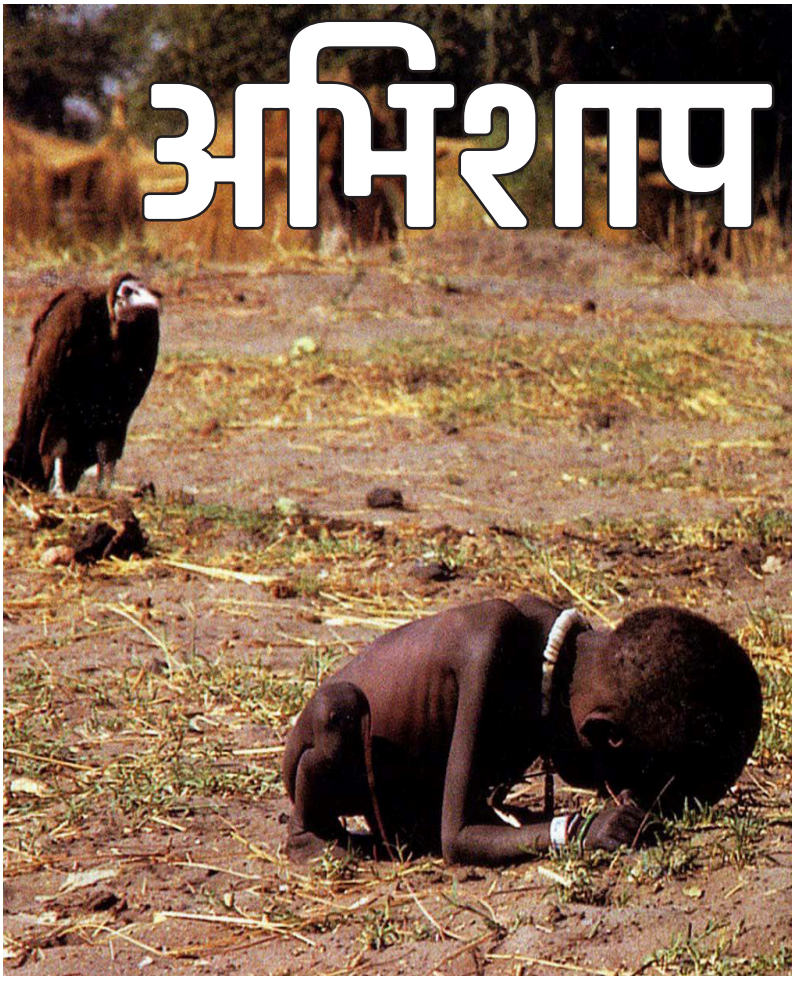

1993 में सूडान में पड़े अकाल के दौरान ली गई एक तस्वीर विश्व प्रसिद्ध है। हड्डियों के कंकाल की सूरत धरती से चिपके एक बच्चे की तस्वीर, जिसके पीछे एक गिद्ध ताक़ में बैठा है। इस तस्वीर ने जर्नलिस्ट कार्टर को अचानक दुनिया भर में मशहूर कर दिया था। कार्टर को उनकी फोटोग्राफ़ी के लिए कोलंबिया यूनिवर्सिटी द्वारा पुलित्ज़र प्राइज से सम्मानित किया गया था।

उन दिनों एक साक्षात्कार के दौरान एक पत्रकार ने कार्टर से पूछा कि भूखे गिद्ध के रहमोकरम पर पड़े हुए इस कुपोषित बच्चे का अंजाम क्या हुआ? कार्टर ने इस प्रश्न से परेशान होकर जवाब दिया कि "मुझे नहीं मालूम कि उसके बाद क्या हुआ? मुझे फ्लाइट पकड़नी थी इसलिए मैं ज़्यादा देर तक वहां रुक नहीं पाया।" उसके इस जवाब को सुनकर इंटरव्यू करने वाले पत्रकार ने अचंभित होकर कहा, "वास्तव में, उस बच्चे के आगे-पीछे दो गिद्ध मौजूद थे। जिनमें से एक के हाथ में कैमरा था।"

पत्रकार के इस एक वाक्य ने कार्टर के अंदर दबे हुए इंसान को झिंझोड़ कर रख दिया। उसके अपने विवेक ने उसे इतना श्राप दिया कि उसके पास कोई चारा नहीं बचा सिवाय आत्महत्या के! कार्टर की बुनियादी ग़लती यही थी कि उसने अपने आपको एक फ़ोटोग्राफ़र समझ रखा था। उन्होंने अपने पेशे को अहमियत दी थी।

यही ग़लती दुनिया भर के पत्रकार, लेखक, कलाकार और राजनेता भी कर रहे हैं, जो शाम व फ़िलिस्तीन और इराक़ के मासूम बच्चों का गोश्त नोच-नोचकर खाने वाले और हमारे देश में बेगुनाह राहगीरों की भीड़-हत्या कर अपनी

Abbas Soap Factory

Manufacturer of bath soap,

toilet soap & washing powder in Kolkata, West Bengal.

Md Khalid
Call 08981605834













Office No. 77/2, Topsiya Road, South, Kolkata-700046, West Bengal, India



मेरी प्रार्थना, मेरा बलिदान, मेरा जीवन और मेरी मृत्यु दुनिया के सर्वशक्तिमान अल्लाह के लिए है।" 99 प्रतिशत दावेदारों का सफ़र एक बेरुह नमाज़ से आगे बढ़ ही नहीं पाता है। ऐसे ही निरे मज़हबी लोगों को देखकर धर्म और राजनीति के बीच तलाक़ का माहौल गर्म हुआ था और ऐसे ही किसी मौक़े पर किसी बड़बोले शातिर ने झूठ बोल दिया होगा कि "इंसानियत ही अस्ल मज़हब है"!!

प्यास बुझाने वाले इंसानीनुमा गिद्धों को नज़रअंदाज़ करके उनके उत्पीड़न को ईंधन मुहैया कर रहे हैं।

काश की कभी उनके अंदर की मानवीय संवेदना जाग उठे! यह वह ग़लती है जो हर एक पेशेवर करता है। अपना काम करते हुए वह किसी प्रोफ़ेशनल डांसर से कम नहीं है, जो सिर्फ़ अपनी ही धुन पर नाचना जानती हो। उसे बस इतना याद है कि महफ़िल के अंतराल में चंद सिक्के उनकी "बे आंचल" गोद में डाल दिए जाएंगे। महफ़िल ख़त्म और उसकी ज़िम्मेदारी ख़त्म। यह निरा बाज़ारीपन है। मार्केटिंग की यह ग़लती आदमी को इंसान नहीं बनने देती।

इस रवैये ने सामाजिक और पारिवारिक सिस्टम को चकनाचूर कर दिया है, यही देश में जुल्म और अन्याय का कारण है, इसने मानवता को तहस-नहस कर दिया है।

दुर्भाग्य से यही ग़लती वो लोग भी करते हैं जो ख़ैर उम्मत के 'परिवारिक सदस्य' हैं। नमाज़ अदा करने, रोज़ा रखने, ज़क़ात देने और हज अदा करने तक सीमित हैं। फलतः दीन की अन्य सभी मांगें जो परिस्थितियों के अनुसार होनी चाहिए वे हो नहीं पातीं। आलिम की हैसियत बस एक 'वाज़ो-नसीहत' देने के लिए है, मुफ़्ती और न्यायविद् सिर्फ़ एक निर्दयी जज बन गए हैं और सूफ़ी और साधक बस एक 'हो' में 'हवा' हो रहे हैं। बाक़ी सब अहले-फ़िक्र व नज़र एक-दूसरे पर आंख गड़ाए बैठे हैं। सब अपने-अपने 'पेशे' की ईमानदारी का साइनबोर्ड लगाए उस नाचने वालियों की तरह नांच रहे हैं। इनमें और नाचने वालियों में बस इतना-सा फ़र्क़ है कि नाचने वाली अपने पेशे पर अंदर से शर्मिंदा है, जबकि बाक़ी सब 'नचनियां' नाच-नाचकर अपने-अपने नृत्य की पवित्रता का राग अलाप रहे हैं।

यही कारण और एक मात्र कारण है कि "मेरी प्रार्थना, मेरा बलिदान, मेरा जीवन और मेरी मृत्यु दुनिया के सर्वशक्तिमान अल्लाह के लिए है।" 99 प्रतिशत दावेदारों का सफ़र एक बेरुह नमाज़ से आगे बढ़ ही नहीं पाता है। ऐसे ही निरे मज़हबी लोगों को देखकर धर्म और राजनीति के बीच तलाक़ का माहौल गर्म हुआ था और ऐसे ही किसी मौक़े पर किसी बड़बोले शातिर ने झूठ बोल दिया होगा कि "इंसानियत ही अस्ल मज़हब है"!! ■■

“ज़मीन और आसमानों
में जो कुछ भी है अल्लाह का है।
और जो (फ़रिश्ते) उसके पास हैं वे न
अपने को बड़ा समझकर उसकी
बन्दगी से मुंह फेरते हैं और न दुखी
होते हैं। रात और दिन उसकी तसबीह
करते रहते हैं, दम नहीं लेते।”

(क़ुरआन 21:19)

A Well Wisher

ABDUR RAB
KOLKATA

मुख्य स्तम्भ

डॉक्टर नफ़ीस अख़्तर
कानपुर, यूपी



धार्मिक स्वतंत्रता, धर्मान्तरण और राज्य

अंतःकरण की और धर्म को अबाध रूप से मानने, आचरण करने और प्रचार करने की स्वतंत्रता मानव के मौलिक अधिकारों में सम्मिलित है। आधुनिक विश्व ने इस मौलिक अधिकार को व्यापक रूप में मान्यता दी है। यूरोपीय महाद्वीप के देश लंबी धार्मिक लड़ाइयों के बाद जिस निष्कर्ष पर पहुंचे वह यही था कि प्रत्येक व्यक्ति को अपनी पसंद का धर्म अपनाने और आचरण करने की आज़ादी मिलनी चाहिए तथा राज्य को न केवल यह कि धार्मिक मामलों में किसी तरह का हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए अपितु उसे स्वयं के लिए इससे ख़ास दूरी बनाए रखना चाहिए। राज्य का धर्मनिरपेक्ष होना धार्मिक स्वतंत्रता का मानक क़रार पाया। प्रोटेस्टेंट और कैथोलिक ईसाइयों के बीच लंबे चले हिंसक धार्मिक विवादों के पश्चात यूरोप ने स्वतंत्रता, बंधुत्व तथा समानता पर आधारित धर्मनिरपेक्षता और लोकतंत्र का मार्ग अपनाया। कैथोलिक चर्च का धर्म पर एकाधिकार समाप्त हुआ और उसके द्वारा जारी धार्मिक प्रताड़ना और दमन का अंत हुआ। आधुनिक भारत के निर्माताओं ने यूरोप के निकट इतिहास से सबक़ लेते हुए धर्मनिरपेक्षता तथा लोकतंत्र के सिद्धांतों पर ही स्वतंत्र भारत की नींव रखी और धार्मिक एवं वैचारिक स्वातंत्र्य को संविधान की मौलिक अधिकारों की सूची में रखा। 25 नवंबर 1981 को संयुक्त राष्ट्र महासभा ने भी अंतर्राष्ट्रीय क़ानून के कई अन्य

धार्मिक स्वतंत्रता में अपनी पसंद का धर्म स्वीकारने, उस पर अमल करने, उसका प्रचार करने, उसे त्यागने और बदलने की आज़ादी शामिल है। इनमें से किसी एक पर प्रतिबंध व्यक्ति के मौलिक अधिकार पर प्रतिबंध है। व्यावहारिक न सही पर वैचारिक तौर पर आज की दुनिया इन प्रतिबंधों की क़ायल नहीं है। इस पर अब चर्चा भी समाप्त हो चुकी है। प्रश्न यह है कि आख़िर धार्मिक स्वतंत्रता इतना महत्वपूर्ण क्यों है?

उपकरणों के अनुसार धर्म की स्वतंत्रता को एक मौलिक मानवाधिकार के रूप में मान्यता देते हुए धर्म अथवा विश्वास के आधार पर सभी प्रकार की असहिष्णुता और भेदभाव के उन्मूलन पर घोषणा पारित की।

धार्मिक स्वतंत्रता में अपनी पसंद का धर्म स्वीकारने, उस पर अमल करने, उसका प्रचार करने, उसे त्यागने और बदलने की आज़ादी शामिल है। इनमें से किसी एक पर प्रतिबंध व्यक्ति के मौलिक अधिकार पर प्रतिबंध है। व्यावहारिक न सही पर वैचारिक तौर पर आज की दुनिया इन प्रतिबंधों की क़ायल नहीं है इस पर अब चर्चा भी समाप्त हो चुकी है। प्रश्न यह है कि आख़िर धार्मिक स्वतंत्रता इतना महत्वपूर्ण क्यों है?

वजह यह है कि इस तथ्य से इंकार मुमकिन नहीं है कि धर्म मानव-जीवन और उसके इतिहास का अभिन्न अंग रहा है और है। मानवशास्त्र के अध्ययन से पता चलता है कि अतीत में भी कोई इन्सानी सोसाइटी ऐसी नहीं रही है जिसमें धर्म की भूमिका न रही हो। धर्म का संबंध विश्वदर्शन (World View) से है। हर व्यक्ति का अपना विश्वदर्शन होता है। दुनिया में कोई व्यक्ति नहीं जो दुनिया के बारे में कोई दर्शन या नज़रिया न रखता हो। दर्शनविहीन होना तो किसी के लिए संभव ही नहीं है। व्यक्ति का यही विश्वदर्शन उसके चरित्र का निर्माण करता है। यह दर्शन सही भी हो सकते हैं और ग़लत भी, जिनमें से सत्य तक पहुंचने का एकमात्र मार्ग विचार-विमर्श है। यदि हम इसका प्रचार और इसका स्वीकारना प्रतिबंधित कर दें तो सत्य लापता हो जाएगा। सत्य तक पहुंचने के लिए आज़ादी के साथ बिना किसी भय के धार्मिक एवं दार्शनिक विचारों के आदान-प्रदान का वातावरण आवश्यक है। स्वतंत्र चेतना पर पाबंदी मानव संस्कृति के विकास पर बाधा ही उत्पन्न करेगी।

धर्म एक ज़मीनी वास्तविक्ता है। हर व्यक्ति किसी न किसी धर्म से जुड़ा हुआ है। जो लोग ख़ुद को नास्तिक समझते हैं या कहते हैं, वस्तुतः नास्तिकता उनका एक धर्म ही है। यदि राज्य किसी धर्म विशेष को सब पर थोपता है या किसी पर पाबंदी लगाता है तो इससे अशांति जन्म लेगी। असहिष्णुता का वह माहौल पैदा होगा जिससे यूरोप बड़ी मुश्किल से बाहर आ सका है। इसी तरह धर्मान्त्रण पर रोक समाज की तार्किकता और विवेक के लिए अवरोधक है। वेल्थ ऑफ़ नेशन के लेखक एडम स्मिथ लिखते हैं।

"धर्म चुनने की अनुमति देना समग्र रूप से समाज और सिविल मजिस्ट्रेट के सर्वोत्तम हित में है, क्योंकि यह नागरिक अशांति को रोकने में मददगार और असहिष्णुता को कम करता है। जब तक एक समाज में पर्याप्त धर्म या धार्मिक संप्रदाय स्वतंत्र रूप से काम कर रहे होते हैं वे सभी अपनी अधिक विवादास्पद और हिंसक शिक्षाओं को संयमित करने और सुधारने पर मजबूर होते हैं ताकि ज़्यादा से ज़्यादा लोगों को धर्मान्तरण के लिए अपनी ओर आकर्षित कर सकें। यह धर्मान्तरण के लिए धार्मिक संप्रदायों के बीच मुफ़्त प्रतियोगिता है जो लंबे समय में स्थिरता और शांति सुनिश्चित करती है।"

धर्म चुनने की आज़ादी ही धर्म सुधार और धार्मिक मान्यताओं एवं कार्यों को तार्किक बनाने की ओर ले जाती है। फिर सबसे महत्वपूर्ण यह है कि धर्म पूर्ण रूप से एक निजी मामला है और निजी मामले में यूं भी राज्य को किसी तरह के हस्तक्षेप की अनुमति नहीं दी जा सकती है। व्यक्तिगत स्वतंत्रता और समानता ही लोकतंत्र की आत्मा है, इसलिए एक व्यक्ति कब कौन-सा

धर्म स्वीकार करता है और कब किसे त्याग करता है यह उसके निजी फ़ैसलों और पसंद पर आधारित होना चाहिए। मानव समाज को मानव चेतना पर दृढ़ विश्वास के साथ सिर्फ़ सत्य से प्रेम करना चाहिए। सत्य वैचारिक स्वतंत्रता को अपने लिए ख़तरा नहीं समझता, बल्कि इसे वह अपने प्रसार के लिए अनुकूल पाता है। कोई भी धर्म आस्तिक अथवा नास्तिक यदि वह सत्य पर होने का दावा करता है तो उसे प्रतिबंधों पर नहीं अपनी तर्कशीलता पर भरोसा करना चाहिए। व्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा करना अवश्य ही राज्य का कार्य है। अतः उसे यह सुनिश्चित करना होगा कि व्यक्ति की स्वतंत्रता किसी बाहरी दबाव का शिकार न हो, लेकिन इस बहाने उसे स्वतंत्रता के अधिकार का प्रयोग करने में व्यवधान पैदा करने का कोई हक़ नहीं है।



राज्य का कोई धर्म न होना और प्रशासनिक कार्यों में धर्म का प्रत्यक्ष रूप से दख़ल न होना भी धार्मिक स्वतंत्रता क़ायम रहने के लिए ज़रूरी है। यदि राज्य ने बहुलतावादी समाज में किसी एक धर्म को सरकारी धर्म का दर्जा दिया और यदि विधि निर्माण और प्रशासनिक फ़ैसले किसी विशेष धर्म के आधार पर होने लगे या सरकारों को किसी विशेष धर्म की रक्षा अथवा प्रचार की चिंता होने लगे तो अन्य धर्म व दर्शन की आज़ादी का दायरा तंग होने लगेगा और नागरिकों की धार्मिक स्वतंत्रता ख़तरे में पड़ जाएगी। इसका अर्थ यह बिल्कुल भी नहीं है कि राजनीतिक व्यवस्था में धर्म की कोई भूमिका नहीं होती है। हक़ीक़त यह कि वास्तविक धर्म राजनीतिक व्यवस्था को पथ-भ्रष्ट होने से बचाता है। एक तरफ़ तो धर्म चरित्र निर्माण करता है। समाज को नैतिक मूल्य प्रदान करता है जिसका असर यदि धर्म की शिक्षाओं को गंभीरता से लिया जाए तो हमें राजनीतिक व्यवस्था और राजनेताओं में दिखाई दे सकता है, बल्कि दिखाई देना चाहिए। दूसरी तरफ़ लोकतंत्र में विधि निर्माण का आधार जिस जनमत पर होता है उसके निर्माण में भी धर्म की भूमिका सबसे अधिक होती है या हो सकती है। यानी एक लोकतांत्रिक व्यवस्था में यह तो नहीं होना चाहिए कि विधि निर्माण का कार्य अप्रत्यक्ष रूप से धर्म के हवालों से किया जाने लगे, लेकिन अन्य दर्शन और विचारों की भांति धर्म को भी किसी भी मामले में अपनी तार्किक शक्ति और मेरिट की बुनियाद पर जनमत बनाने का अधिकार मिलना ही चाहिए। फिर यह जनमत धर्म की बुनियाद पर नहीं, बल्कि अपने तर्क और गुणवत्ता के आधार पर विधि निर्माण का हिस्सा बने तो धर्मनिरपेक्षा की स्प्रिट के बिल्कुल अनुकूल बात है और इसका स्वागत होना चाहिए। एक वास्तविक और सत्य धर्म ख़ुद को ऊपर से थोपने के बजाय इसी तरह व्यक्ति (individual) को एड्रेस करते हुए समाज का हिस्सा बनता है। वास्तविक्ता यह है और मानव इतिहास भी साक्षी है कि राज्य का कोई धर्म होने की सूरत में दमन, प्रताड़ना और हिंसा को कभी रोकना संभव नहीं हुआ है। चाहे समाज एक ही धर्म के मानने वालों पर मुश्तमिल क्यों न हो।

मुसलमानों के इतिहास में अब्बासी, फ़ातिमी और उस्मानी राज्य इसके उदाहरण हैं और ईसाई तारीख़ में मेडीवल यूरोप का हाल इसकी मिसाल है। धर्म कोई भी हो कालान्तर में अनेक व्याख्याओं का उत्पन्न होना स्वाभाविक होता है। अब किस मामले में कौन-सी व्याख्या अपनाई जाए यह विवादास्पद हो जाता है और शासक वर्ग हमेशा अपने हित के अनुकूल व्याख्या को कुबूल करता है, बल्कि आवश्यक्ता अनुसार नई व्याख्याएं गढ़ता है और ईश्वर या ख़ुदा के हवाले से उसे मनवाता है। आप असहमति का हक़ भी नहीं रखते, क्योंकि ख़ुदा पर आपत्ति का आपको हक़ नहीं है। जिन्होंने किया वे अपनी जानों से हाथ धो बैठे। ख़ुदा के हवाले से की गई बात संशोधन की पात्र नहीं होती है।

सारांश यह है कि एक सच्चा धर्म कभी इन्सानी आज़ादी पर पहरे नहीं बैठाता बल्कि वह हर व्यक्ति को स्वतंत्र रूप से मानने और छोड़ने का हक़ देता है। न किसी अन्य धर्म को वह कभी प्रचार के अधिकार से वंचित करता है, क्योंकि उसे अपने तर्कों और गुणवत्ता पर भरोसा होता है। ■■

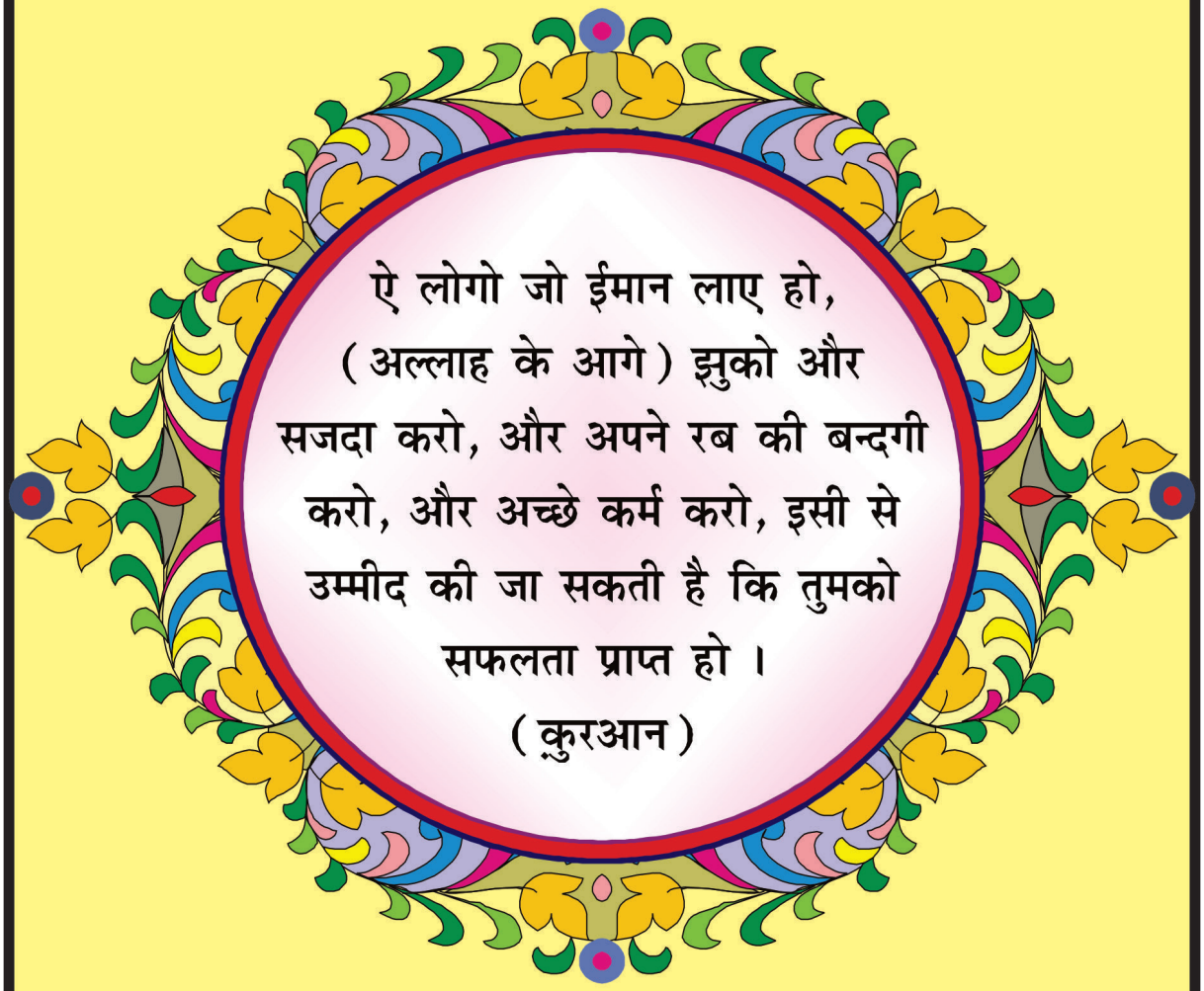

DR. Z. H. KHAN
(GAYA)



कितना सच, कितना काल्पनिक

मुख्य स्तंभ



वारिस हुसैन
दिल्ली

किसी ने सच कहा है कि "आप घोड़े को खींचकर पानी तक ला सकते हैं, पर उसे बलपूर्वक पानी पिला नहीं सकते।" अंग्रेज़ी के इस मुहावरे को सुनकर किसी को कोई आश्चर्य नहीं होगा। हर कोई जानता है कि दूसरों की इच्छा के विरुद्ध उनसे कोई भी कार्य कराना असंवैधानिक ही नहीं, अनैतिक भी है और हर कोई इस सत्य से भी भली-भांति परिचित है कि इंसान घोड़े की तुलना में अधिक दृढ़ता और इच्छाशक्ति का मालिक है। घोड़ा एक जानवर मात्र है, जबकि इंसान अल्लाह की सबसे अनमोल और सर्वश्रेष्ठ कृति है। शारीरिक शक्ति में भले ही इंसान घोड़े का मुक़ाबला न कर पाए, पर बौद्धिकता, मानसिक शक्ति और अपने आदर्शों पर जम जाने की उसमें अपार और असीमित क्षमता पाई जाती है।

अपनी इस दृढ़ इच्छाशक्ति का परिचय इंसान अपनी बाल-अवस्था में ही दे देता है। छोटे से बालक के रूप में जब वह खाना न खाने का निर्णय

कर लेता है, तो मां-बाप के लाख प्रयत्न के उपरान्त भी वह अपना मुंह खोलकर नहीं देता। और निराश मां-बाप को उसे खिलाने के अपने प्रयत्न से पीछे हटना पड़ता है। आयु के साथ उसकी इच्छाशक्ति और दृढ़ता में वृद्धि होती है और एक समय आता है जब वह स्वयं अपने भले-बुरे का निर्णय करने की मज़बूत स्थिति में आ जाता है। मां-बाप और पूर्वजों से मिले संस्कार उसके जीवन का महत्वपूर्ण अंग बन जाते हैं और इन्हीं आदर्शों के सहारे वह अपने जीवन की गाड़ी को आगे बढ़ाता जाता है।

यह संभव है कि किसी रात कोई चोर घर में घुसकर चाक़ू की नोक पर उससे घर में रखे सारे पैसे छीन ले। अपने जीवन की रक्षा के लिए वह चोर को पैसे दे देना स्वीकार कर लेगा। राह चलते कोई उसे रोककर उसकी गाड़ी छीन ले, तो वह गाड़ी देने पर मजबूर हो जाएगा। उसकी पत्नी का पर्स कोई छीन कर भागे तो, पर्स गया तो गया पर जान तो बच गई, सोचकर शांत रह जाएगा। लालच या बन्दूक़ की नोक पर किसी से झूठी गवाही लिखवा लेना भी संभव है।

पर क्या किसी को कभी यह अनुभव हुआ है कि कोई दाढ़ी वाला व्यक्ति किसी के घर में घुस आया हो और तलवार गर्दन पर रखकर बोला हो कि इस्लाम स्वीकार करो नहीं तो अभी तुम्हारी गर्दन शरीर से अलग कर दी जाएगी? नहीं, ऐसा अनुभव किसी को कभी नहीं हुआ होगा। बल्कि कोई यदि कभी मज़ाक़ में ऐसे अनुभव का उल्लेख करे तो सुनने वाला कभी उस पर विश्वास नहीं करेगा। उलटे उसका मज़ाक़ उड़ाएगा। हर व्यक्ति जानता है कि जब अपनी आस्था या अपने आदर्शों को परिवर्तित करने की बात आती है, तो इसको बलपूर्वक परिवर्तित नहीं कराया जा सकता। और बहुत सारे लोग बड़े विश्वास से यह कहते सुने जा सकते हैं, कि कोई कितना भी बल का उपयोग कर ले, मुझे मेरे पूर्वजों के धर्म से हटा नहीं सकता।

तो फिर देश में चल रही बलात् धर्म परिवर्तन के इन समाचारों पर लोग क्योंकर विश्वास किए ले रहे हैं? कितना हास्यास्पद लगता है यह सुनना कि एक या दो दाढ़ी रखे हुए वृद्ध व्यक्ति इतने शक्तिशाली हो गए कि एक हज़ार लोगों का धोखे से धर्म परिवर्तित करा डाला और इतना ही नहीं वह इतने नासमझ थे कि उन्होंने अपने इस कृत्य का पूरा लेखा-जोखा भी संभाल कर रखा हुआ था और सोने पर सुहागा यह कि इन एक हज़ार में अधिकतर मूक-बधिर लोग थे। विश्वास नहीं होता कि यह दोनों आरोपी मूक-बधिर की भाषा के माहिर होंगे, कि उन्हीं की भाषा में उनको डराया, धमकाया, लालच दिया और फिर एफिडेविट बनवा कर मजिस्ट्रेट से हस्ताक्षर भी करा लिए और मजिस्ट्रेट ने अपने हस्ताक्षर के साथ काग़ज़ पर मोहर भी लगा दी। क्या यह दोनों दाढ़ी वाले वृद्ध इतने शक्तिशाली हो गए थे कि नौजवानों के साथ मजिस्ट्रेट को भी डरा धमका कर उनसे मोहर लगवा लेते थे? सोचिए, क्या इन बातों पर विश्वास किया जा सकता है ?

अच्छा चलिए थोड़ी देर के लिए इस आरोप पर विश्वास कर लेते हैं कि बलपूर्वक धर्म परिवर्तन कराया गया होगा। पर यह कैसा बल है जो सदियों और वर्षों तक 24 x 7 अपना प्रभाव बनाए रखता है? कैसे यह लोगों को बाधित करता है कि वह बिल्कुल एकांत में भी उनपर जबरन थोपे गए धर्म का अनुपालन करते फिरें? छिप-छिपकर नमाज़ पढ़ें, रोज़े रखें और घर वालों से छिपाकर क़ुरआन का अध्ययन करें। यह कैसी लालच है जो उन्हें इतना प्रेरित कर देती है कि वह अपने जीवन से धीरे-धीरे बुराइयों को मिटाने का प्रयत्न करने लगें, मां-बाप का पहले से अधिक आदर और सेवा करने लगें, जबकि वह हर समय उनको घर से निकाल देने की धमकी दे रहे हो? यह कैसा प्रभाव है जो उनको इस बात पर उभार देता है कि वह अपनी संतानों को भी बलपूर्वक थोपे गए इस धर्म का अनुपालन करने की शिक्षा देने लगें? अपना और अपनी सन्तान का नाम तक बदल दें, दाढ़ी बढ़ा लें और मस्जिदों में जाने लगें। और यह कैसी धमकी है जो महिलाओं को हिजाब लगाने और बुर्क़ा पहनने पर मजबूर कर देती है और समाज की समस्त आलोचनाओं की उपेक्षा करते हुए वह इस बलपूर्वक थोपे गए धर्म की प्रचारक बन जाती हैं?

क्या किसी को कभी यह अनुभव हुआ है कि कोई दाढ़ी वाला व्यक्ति किसी के घर में घुस आया हो और तलवार गर्दन पर रखकर बोला हो कि इस्लाम स्वीकार करो नहीं तो अभी तुम्हारी गर्दन शरीर से अलग कर दी जाएगी? नहीं, ऐसा अनुभव किसी को कभी नहीं हुआ होगा। बल्कि कोई यदि कभी मज़ाक़ में ऐसे अनुभव का उल्लेख करे तो सुनने वाला कभी उस पर विश्वास नहीं करेगा।

धर्म परिवर्तन के आरोपों की वास्तविकता को यदि समझना है तो इस्लाम का अध्ययन आवश्यक है। तभी आपको अनुभव होगा कि इस्लाम किस तरह लोगों के हृदय परिवर्तन करने का चमत्कार करता है और किस प्रकार यह लोगों में इतना आत्म-बल उत्पन्न कर देता है कि वह पूरे दुनिया का मुक़ाबला करना स्वीकार कर लेते हैं, पर इसकी शरण से बाहर आना स्वीकार नहीं करते। इस्लाम को समझने के लिए आपको कुरआन का अध्ययन करना होगा।



नहीं, मीडिया कितना ही शोर मचाये और सोशल मीडिया पर कितनी ही फेक न्यूज़ चलाई जाएं, यह बात गले के नीचे नहीं उतरती की ऐसा भी संभव हो सकता है। कितना सरल था ऐसे 'पीड़ितों' के लिए कि वह पहला अवसर मिलते ही सीधे पुलिस थाने चले गए होते और अपने ऊपर थोपे गए बल को वहीं उतार फेंकते। सब नहीं तो उनमें से किसी एक-दो को तो ज़रूर इन मुल्ज़िमों के विरुद्ध रिपोर्ट दर्ज करानी चाहिए थी। आश्चर्य की उन एक हज़ार में से कोई एक भी ऐसी स्थिति में अब तक नहीं आया कि उस पर उपयोग किया गया बल, भय या लालच उसे इतना अवसर देते कि वह अपने बचाव में कोई एक्शन ले पाता। क्या इनके साथ कोई दाढ़ी वाला हर समय साए की तरह लगा रहता था? क्या इनको अपने घरों में इतना अवसर भी न मिलता था कि वह अपने मां-बाप से ही उन दाढ़ी वालों के विरुद्ध शिकायत कर देते? रात को किसी समय उठकर पुलिस को कॉल कर देते?

देखने में तो यह आ रहा है कि इन लोगों ने अपना घर-बार छोड़ना स्वीकार कर लिया। मां-बाप की सम्पत्ति से बेदख़ल कर दिए जाने का भी विरोध नहीं किया। अपना शहर छोड़कर दूसरे शहर में स्थानांतरित होने पर मजबूर हो गए, पर बलपूर्वक थोपे गए उस धर्म को छोड़ना किसी मूल्य पर भी स्वीकार न किया। विवाह किया तो इसी धर्म में। बच्चों के नाम रखे तो इसी धर्मानुसार। इस धर्म की भाषा, इसकी मान्यताएं, इसके रीति-रिवाज और इसकी उपासना के तरीक़ों को सीखने के लिए अन्थक मेहनत कर डाली। इतना सब कुछ किया पर उस अदृश्य और काल्पनिक बल अथवा लालच का कभी रोना नहीं रोया।

वर्तमान स्थिति तो यह है कि वह दोनों दाढ़ी वाले वृद्ध पुलिस की हिरासत में हैं। कोई बल, भय या लालच रहा भी होगा तो अब वह समाप्त हो गया है। क्या चीज़ है जो इन लोगों को अब भी रोके हुए है सब कुछ सच-सच बता देने से? इस समय सोशल मीडिया पर ऐसे लोगों के वीडियोज़ की बाढ़ आई हुई है। अनेक चैनल्स हैं जो इन लोगों के वक्तव्य का प्रसारण कर रहे हैं। इनमें पुरुष भी हैं और महिलाएं भी। पर यह कैसा अदृश्य बल है जो इनको अभी भी इन दोनों दाढ़ी वालों के पक्ष में बोलने पर मजबूर किए जा रहा है? इस समय तो पूरा प्रशासन इनके सहारे को सामने आया हुआ है। पुलिस वाले हर किसी को डराते-धमकाते फिर रहे हैं।

कितना अच्छा अवसर है उस बल और लालच के प्रभाव को उतार फेंकने का? कितना सरल है सारी वास्तविकता का भांडा फोड़ देना और थोपे गए धर्म के आडम्बर से बाहर आकर अपने घरों को वापस चले जाना। पर घोर आश्चर्य कि जितने भी वक्तव्य सुनने को मिले सब ने लगभग एक सुर में बलपूर्वक धर्म परिवर्तित कराए जाने के आरोप का

खंडन कर दिया। उन दोनों दाढ़ी वालों को निर्दोष बता दिया और साफ़-साफ़ स्वीकार कर लिया कि न किसी बल का उपयोग हुआ है, न किसी लालच का। सबने स्वेच्छा से धर्म परिवर्तन की बात स्वीकार की है। सब ने गहराई से अध्ययन किया। इसकी वास्तविकता और सत्यता का बोध होने पर इस नए धर्म को स्वीकार किया, सब इससे संतुष्ट हैं और किसी का इससे पलटने का कोई इरादा नहीं है।

इतना ही नहीं, इनमें से कुछ के कोर्ट में गुहार लगाने और घर-वापसी के प्रयत्न में लगे असामाजिक तत्वों से सुरक्षा मांगने की बात भी सामने आई है। है न घोर आश्चर्य की बात? अरे, यही कोर्ट-कचहरी तो है जहां उनको पहले जाना चाहिए था, अपने बलात् धर्म परिवर्तन की गुहार लेकर। उस समय तो यह शांत रहे और जब अवसर मिला तो उलटे उन्हीं लोगों से अपनी जान को ख़तरा बताने लगे जो उन्हें बलपूर्वक धर्म परिवर्तन से छुटकारा दिलाना चाहते हैं। यह कैसी सोच पैदा हो गई इन लोगों में? जिनको लोग भक्षक बता रहे हैं, उन्हें यह लोग अपना रक्षक मानते हैं। और रक्षक के रूप में सामने आए अपने तथाकथित हितैषियों को इन लोगों ने भक्षक की संज्ञा दे डाली? यह कोई मामूली परिवर्तन नहीं, यह तो चमत्कार है।

जी, वास्तव में यह चमत्कार ही है। और इस चमत्कार का अनुभव हर वह व्यक्ति कर सकता है, जो उन लोगों के चुने हुए मार्ग पर चलने का प्रयत्न करेगा, जो इस समय चर्चा का विषय बने हुए हैं। वह मार्ग जिसमें हर पूर्वाग्रह को त्यागकर उस धर्म का अध्ययन करने का प्रयत्न किया जाए जिसके इन सब पर बलपूर्वक थोपे जाने का आरोप लगाया जा रहा है। सारी नफ़रत, द्वेष, वैमनस्य और शत्रुता की भावना को हृदय से निकाल कर, समाज की सारी आलोचनाओं का मुक़ाबला करते हुए उस सत्य मार्ग की वास्तविकता को जानने का गंभीर प्रयास किया जाए जो इस समय पूरे विश्व में करोड़ों लोगों के आकर्षण का केंद्र बना हुआ है, जिसकी सत्यता को स्वीकार करते हुए बड़े-बड़े नाम इसकी शरण में आ चुके हैं। अनेक सर्वेक्षणों में जिसके सम्बन्ध में यह बात स्पष्ट हो चुकी है कि इस समय विश्व में सबसे तेज़ी से स्वीकार किए जाने वाला धर्म यही है।

जी हां, यह इस्लाम ही है जो यह चमत्कार कर दिखाने की क्षमता रखता है। जो लोगों में ऐसा परिवर्तन लाता है कि वह उसके सामने दुनिया की सारी धन-दौलत को तुच्छ समझने लगते हैं। सब कुछ त्याग सकते हैं, पर इस्लाम को छोड़ने का सोच भी नहीं सकते, जिसमें लोगों को अपने जीवन का उद्देश्य स्पष्ट समझ में आ जाता है और फिर वह अपने जीवन को उसी मार्ग पर चलाकर सफल बनाने में जुट जाते हैं। जो यह आदर्श हृदय में दृढ़ता से बैठा देता है कि पूज्य और उपासनीय सिर्फ़ वह अल्लाह है, जो इस संसार का अकेला मालिक, सृष्टिकर्ता और संचालक है। दुनिया की बनाई भेदभाव और नफ़रत की समस्त दीवारों को भेदता हुआ जब यह सत्य किसी के दिल में उतरता है, तो उसे तुरंत अपनी भूल का आभास हो जाता है और वह स्वयं को परिवर्तित करने को व्याकुल हो उठता है। फिर न उसे किसी धमकी की परवाह होती है, न लालच की।

धर्म परिवर्तन के आरोपों की वास्तविकता को यदि समझना है तो इस्लाम का अध्ययन आवश्यक है। तभी आपको अनुभव होगा कि इस्लाम किस तरह लोगों के हृदय परिवर्तन करने का चमत्कार करता है और किस प्रकार यह लोगों में इतना आत्म-बल उत्पन्न कर देता है कि वह पूरे दुनिया का मुक़ाबला करना स्वीकार कर लेते हैं, पर इसकी शरण से बाहर आना स्वीकार नहीं करते। इस्लाम को समझने के लिए आपको क़ुरआन का अध्ययन करना होगा। क्या आप इसके लिए तैयार हैं?

■■



मुख्य स्तम्भ



फ़ैज़ान मुस्तफ़ा

धर्मांतरण रोधी क़ानून, धर्मनिरपेक्षता और निजता के संवैधानिक अधिकार का उल्लंघन

धर्मान्तरण रोधी विभिन्न प्रावधानों को लेकर समाज के विभिन्न वर्गों एवं राजनीतिक दलों की अलग-अलग राय हैं। इस क़ानून को लेकर जाने-माने विधि विशेषज्ञ फ़ैज़ान मुस्तफ़ा से द वायर हिंदी की बातचीत।

साभार : The Wire - Hindi

❖देश के तीन राज्यों ने धर्मांतरण रोधी क़ानून बनाया है, जिस पर अलग-अलग तबक़ों की अलग-अलग राय है। आप इसे संवैधानिक रूप से कितना व्यावहारिक मानते हैं?

जवाब : यह क़ानून धर्मनिरपेक्षता की मूल अवधारणा के ख़िलाफ़ है, जो संविधान का बुनियादी ढांचा मानी जाती है। इसके साथ ही यह अपना धर्म और अपना जीवन-साथी चुनने के प्रत्येक व्यक्ति के अधिकार के ख़िलाफ़ भी है। यह न केवल व्यक्तिगत फ़ैसले लेने की निजी स्वतंत्रता का स्पष्ट तौर पर उल्लंघन करता है, बल्कि व्यक्ति के सम्मान को भी कमतर करता है। यह क़ानून निजता के अधिकार का भी उल्लंघन करता है।

❖धर्मांतरण के मुद्दे को लेकर बनाए गए इस क़ानून से सामाजिक ढांचे पर क्या प्रभाव पड़ेगा, तथाकथित लव-जिहाद की शब्दावली और भारतीय समाज के संपूर्ण परिप्रेक्ष्य में आप इसे कैसे देखते हैं?

जवाब : मुझे अफ़सोस यह है कि संबंधित क़ानून हिंदुत्व के विचार, जो हमारी सांस्कृतिक परंपरा का हिस्सा रहा है, उसको भी ख़त्म करता है। हमारे यहां स्वयंवर का प्रावधान था, उसमें दुल्हन को अपना पति चुनने की आज़ादी थी। अब हम कह रहे हैं कि उन्हें कोई बेवकूफ़ बना सकता है, वो अपने फ़ैसले नहीं ले सकती हैं।

मेरी समझ में ये किसी 'लव जिहाद' या किसी समुदाय को निशाना बनाने का मामला नहीं, ये हिंदू महिलाओं की स्वतंत्रता आदि के ख़िलाफ़ क़ानून है और उन्हें इसका सबसे ज़्यादा विरोध करना चाहिए। हिंदुओं के एक वर्ग के साथ-साथ मुस्लिम उलेमा भी नहीं चाहते कि दूसरे धर्म में शादी हो।

❖धर्मांतरण के मुद्दे पर तीन राज्यों द्वारा बनाए गए इस क़ानून के संवैधानिक एवं क़ानूनी पहलू क्या हैं?

जवाब : यह संविधान के अनुच्छेद 14, अनुच्छेद 21 और अनुच्छेद 25 का उल्लंघन करता है। अगर कोई व्यक्ति विवाह के लिए धर्म परिवर्तन करता है, यह उसकी पसंद है। कोई किसी अन्य कारण से धर्म परिवर्तन करता है, तब यह उसकी पसंद है। और कोई व्यक्ति फिर से अपने पहले धर्म में लौटना चाहता है, तब भी यह उसकी पसंद है।

हिंदू विवाह क़ानून सहित सभी धर्म के पर्सनल क़ानूनों में यह बात है कि अगर किसी भी तरह के धोखे से या पहचान छिपाकर शादी की गई है तो वो शादी रद्द की जा सकती है। इस बारे में क़ानून है और भारतीय दंड संहिता में भी यह प्रावधान है।

❖क़ानून में धर्म परिवर्तन के इरादे के बारे में सक्षम अधिकारी को 30-60 दिन पहले अग्रिम जानकारी देने की बात है, क्या इसका दुरुपयोग किया जा सकता है?

जवाब : धर्म परिवर्तन करना है तो नए बने क़ानून के तहत उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश में ज़िलाधिकारी के पास दो महीने पहले आवेदन देना होगा, वे इसकी जांच करेंगे और फिर आपको इजाज़त मिलेगी। यह एक धर्मनिरपेक्ष देश है, जहां धर्म आपका निजी मामला है।

❖संविधान में निजी स्वतंत्रता का अधिकार दिया गया है।

जवाब : पुट्टुस्वामी मामले में उच्चतम न्यायालय ने निजता के अधिकार में आप क्या खाते-पीते हैं, किस धर्म को मानते हैं, इसे आपके अधिकार के दायरे में रखा है। इसमें राज्य या समाज का हस्तक्षेप नहीं हो सकता।

❖तीनों राज्यों में धर्मांतरण रोधी क़ानून में अलग-अलग सज़ा का प्रावधान है, जो एक से 10 साल के बीच है, इस पर क्या कहेंगे?

जवाब : नए क़ानून में धर्मांतरण को लेकर दंडात्मक प्रावधान अपने आप में स्पष्ट करते हैं कि ये मनमाने ढंग से संबंधित राज्यों की सुविधा से जुड़े हैं। ये दंडात्मक प्रावधान भारतीय दंड संहिता की भावना के प्रतिकूल हैं। ऐसे समय जब देश इतनी चुनौतियों से जूझ रहा है तब ऐसे विषयों को तूल देना ठीक नहीं है। कोई शादी के लिए धर्म परिवर्तन करे या बिना किसी वजह से धर्म परिवर्तन करे, ये उसकी इच्छा है। इन्हें इसी रूप में लेना चाहिए। यह संविधान को दोबारा लिखने जैसा है। ■■



मुख्य स्तम्भ



मुहम्मद यूसुफ़
'मुन्ना'

दुष्प्रचार के ज़रिये धार्मिक आज़ादी पर हमला

भाजपा शासित अनेक राज्यों में धर्मांतरण रोधी विवादित क़ानून बनने के साथ ही यह आशंका बलवती हो गई थी इन विवादित क़ानूनों का अस्ल निशाना संविधान प्रदत्त धार्मिक आज़ादी है। हिन्दुत्व की प्रयोगशाला में अल्पसंख्यकों के दमन-उत्पीड़न के लिए गढे गए गोयबल्स के झूठे हथियार भंडारों में एक हथियार यह भी है कि मुसलमान और ईसाई छल-बल से धर्मांतरण कराते हैं। गौ-रक्षा, चार शादी, ज़्यादा बच्चा, लव-जिहाद, हिन्दू विरोधी, पाकिस्तानपरस्त आदि दुष्प्रचारक हथियारों का समय-समय पर मनुवादियों द्वारा इस्तेमाल जग-ज़ाहिर है।

मौलाना उमर गौतम, मुफ़्ती जहांगीर आलम क़ासिमी और अन्य लोग इन्हीं झूठे हथियारों का निशाना बने हैं। इन हथकंडों के ज़रिये न सिर्फ़ लालच देकर धर्मांतरण कराने के झूठ को सच साबित करने की कोशिश हो रही है, बल्कि सरकार की नाकामी से जनता का ध्यान हटाया जा रहा है। यही कारण है कि भाजपा सरकार जहां उमर गौतम और जहांगीर क़ासिमी की आड़ में कथित धर्मांतरण की समस्या से निपटने में जितनी मेहनत करती नज़र आती है, महंगी रसोई गैस, सरसों तेल, पेट्रोल-डीज़ल आदि की समस्या से लड़ती नहीं दिखती। जिस देश में संविधान नागरिकों को अपनी पंसद का धर्म चुनने की आज़ादी देता है और यह आज़ादी सभी धर्मों के लोगों को बराबर हासिल है, किसी एक धर्म को धर्मांतरण के लिए ज़िम्मेदार ठहराना आपराधिक और फॉसीवादी कृत्य है।

धर्मांतरण करने और उसका समर्थन करने वाले अनेक दलित विचारकों का मानना है कि भारत जैसे देश में धर्मांतरण दबे-कुचले लोगों के लिए संजीवनी है। ख़ुद संविधान निर्माता बाबा साहब भीमराव अंबेडकर ने हिन्दू धर्म छोड़कर बौद्ध धर्म अपनाया था। पत्रकार और विचारक दिलीप सी

मौलाना उमर गौतम, मुफ़्ती जहांगीर आलम क़ासिमी और अन्य लोग इन्हीं झूठे हथियारों का निशाना बने हैं। इन हथकंडों के ज़रिये न सिर्फ़ लालच देकर धर्मांतरण कराने के झूठ को सच साबित करने की कोशिश हो रही है, बल्कि सरकार की नाकामी से जनता का ध्यान हटाया जा रहा है।



मंडल ने मौलाना उमर गौतम और मुफ़्ती जहांगीर क़ासिमी की गिरफ़्तारी के बाद धर्मांतरण पर मचे शोर को देखते हुए अपने सोशल मीडिया पेज पर लिखा कि धर्म परिवर्तन के बाद दबा-कुचला समाज शैक्षणिक स्तर पर बेहतर हुआ, उसमें समृद्धि आई और सबसे बड़ी बात वे जिस धर्म में गए वहां उन्हें नीच नहीं माना गया। वे सवाल करते हैं कि क्या कोई उच्च शिक्षित, संस्कृत जानने वाला शाकाहारी ईसाई, मुसलमान, यहूदी या पारसी हिन्दू बनना चाहे तो उसे ब्राह्मण बनाया जा सकता है? शूद्र बनने के लिए हिन्दू कौन बनना चाहेगा?

मनुवादी अपनी ख़ामियों को छिपाने के लिए कुतर्क गढ़ते हैं कि लोग लालच में धर्म परिवर्तन कर रहे हैं, इस झूठ को साबित करने के लिए गोदी मीडिया के ज़रिये दुष्प्रचार अभियान चलाया जा रहा है और लाखों रुपये ख़र्च किए जा रहे हैं। एक अख़बार ने ख़बर छापी कि एक व्यक्ति ने दो बोरी चावल के लालच में धर्म बदल लिया। 'लालच' शब्द की आड़ में सरकार को किसी व्यक्ति को धर्म बदलने से रोकने और न मानने पर उसके ख़िलाफ़ बल प्रयोग करने की छूट मिल जाती है। वरना अगर कोई लालच में आकर धर्म परिवर्तन कर रहा है, तो उसे मनुवादी ज़्यादा चावल दे कर धर्म परिवर्तन करने से क्यों नहीं रोक लेते? ऐसा करना मनुवादियों के लिए कोई मुश्किल काम भी नहीं, क्योंकि वे हमेशा से सत्ता पर क़ाबिज़ रहे हैं। सारे सेठ-साहूकार उनके पास हैं। सारा धन-दौलत उनके पास है। कहना ग़लत न होगा कि ये सारे उपाय तभी काम आएंगे जब धर्म परिवर्तन वास्तव में लालच देकर कराया गया हो, वरना स्वेच्छा के धर्म परिवर्तन करने वालों के लिए यह सारे उपाय बेकार हैं। अपनी इन्हीं ख़ामियों को छिपाने के लिए लालच से धर्म परिवर्तन कराने का राग अलापा जाता है और मौलाना उमर गौतम तथा मुफ़्ती जहांगीर को गिरफ़्तार करके लोगों को गुमराह किया जाता है। सरकार की नीयत और नीति को देखते हुए अनेक संगठनों और बुद्धिजीवियों की ओर से इस गिरफ़्तारी का भारी विरोध हुआ और उनको तत्काल रिहा किए जाने की मांग उठी।

जमीअत उलेमा हिन्द के अध्यक्ष मौलाना महमूद मदनी ने इस गिरफ़्तारी की निन्दा करते हुए मौलाना उमर गौतम को क़ानूनी सहायता उपलब्ध कराने का एलान किया। ज़ाहिर है कि इस मनुवादी साज़िश और दुष्प्रचार के ख़िलाफ़ खड़ा होना हर इंसाफ़पसंद की ज़िम्मेदारी है। जमीअत उलेमा हिन्द ने गोदी मीडिया की भूमिका पर सवाल उठाते हुए कहा कि अल्पसंख्यकों और दलित-पिछड़ा समाज के मामले में मीडिया का जज बन जाना और पीड़ितों को अपराधी बनाकर पेश करना आम बात हो गई है।

मौलाना उमर गौतम और जहांगीर के मामले में गोदी मीडिया की वही भूमिका है जो उसने तब्लीग़ी जमाअत के समय अपनाई थी।

मीडिया की इस ख़तरनाक भूमिका पर रोक लगाने की मांग करते हुए मौलाना महमूद मदनी का कहना था कि इस ओर अदालत का ध्यान दिलाया जाएगा, क्योंकि इससे देश के सिस्टम का मज़ाक़ बनता है। दूसरी ओर मामले की सुनवाई के दौरान इलाहाबाद हाईकोर्ट ने मीडिया ट्रायल पर रोक लगाने से इन्कार कर दिया। जब वकील ने कहा कि मीडिया में उमर गौतम के ख़िलाफ़ ग़लत रिपोर्टिंग हो रही है, इस पर रोक लगाने की ज़रूरत है, तब जस्टिस रमेश सिन्हा और जस्टिस विकास श्रीवास्तव की खंडपीठ ने सुप्रीम कोर्ट के जस्टिस डीवाई चन्द्रचूड़ के एक फ़ैसले का हवाला देते हुए कहा कि मीडिया को रिपोर्टिंग का अधिकार है। इतना ज़रूर हुआ कि अदालत ने अधिकारियों को उमर गौतम से संबंधित किसी जानकारी को मीडिया में लीक न किए जाने का आदेश दिया।

नागरिकों की धार्मिक आज़ादी के दमन से जुड़े इस मामले की जमाअत इस्लामी हिन्द ने भी मुखर होकर आलोचना की। जमाअत के उपाध्यक्ष मुहम्मद सलीम इंजीनियर का कहना था कि जिस तरह उमर गौतम और जहांगीर क़ासिमी को गिरफ़्तार किया गया, उन्हें गंभीर धाराओं में फंसाया जा रहा है और मीडिया का एक वर्ग ओवररिएक्ट कर रहा है, यह स्पष्ट रूप से राजनीतिक फ़ायदे के लिए जनभावनाओं के दोहन का प्रयास है। उन्होंने इस गिरफ़्तारी को उत्तर प्रदेश में होने जा रहे विधानसभा चुनाव में फ़ायदा लेने की कोशिशों से जोड़ते हुए सांप्रदायिक आधार पर वोटों के ध्रुवीकरण के लिए किया गया कुत्सित प्रयास बताया।

जमाअत इस्लामी हिन्द की छात्र शाखा स्टूडेंट्स इस्लामिक ऑर्गेनाइज़ेशन ऑफ़ इंडिया (एसआई ओ) ने बयान जारी कर उमर गौतम और मुफ़्ती जहांगीर को तत्काल रिहा करने की मांग की और कहा कि उन पर लालच या दबाव में धर्म परिवर्तन कराने का लगाया गया आरोप पूरी तरह ग़लत है। एसआईओ ने इस गिरफ़्तारी की कड़ी निंदा करते हुए अपने बयान में कहा कि वह उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा बनाए गए धर्मांतरण क़ानून का भी विरोध करती है। यह क़ानून संविधान द्वारा नागरिकों को दिए गए धार्मिक स्वतंत्रता और उसका प्रचार-प्रसार करने की स्वतंत्रता जैसे अधिकारों का हनन करता है। संगठन ने आशा व्यक्त की कि न्यायालय संवैधानिक मूल्यों की सर्वोच्चता सुनिश्चित करते हुए पुलिस और सरकार की असंवैधानिक हरकतों पर रोक लगाएगा। ख़ुद मौलाना मुहम्मद उमर गौतम और मुफ़्ती जहांगीर आलम क़ासिमी के परिजनों का कहना है कि वे लालच या बहला-फुसला कर किसी का धर्म परिवर्तन नहीं कराते थे, सरकार और पुलिस का आरोप बेबुनियाद और उनके ख़िलाफ़ दुष्प्रचार है। जिन लोगों ने अपना धर्म परिवर्तन किया उन्होंने कोर्ट में हलफ़नामा देकर कहा कि वे बिना लालच या दबाव के धर्म बदल रहे हैं। स्थानीय लोगों का कहना है कि मौलाना की गिरफ़्तारी ग़लत और निन्दनीय है।

ग़ौरतलब है कि दोनों आलिम दिल्ली के जामिया नगर में रहते हैं। इस इलाक़े के आम आदमी पार्टी के विधायक अमानतुल्लाह ख़ान ने उनकी गिरफ़्तारी की कठोर शब्दों में निन्दा करते हुए कहा कि यह संवैधानिक

जमीअत उलेमा हिन्द के अध्यक्ष मौलाना महमूद मदनी ने इस गिरफ़्तारी की निन्दा करते हुए मौलाना उमर गौतम को क़ानूनी सहायता उपलब्ध कराने का एलान किया। ज़ाहिर है कि इस मनुवादी साज़िश और दुष्प्रचार के ख़िलाफ़ खड़ा होना हर इंसाफ़पसंद की ज़िम्मेदारी है। जमीअत उलेमा हिन्द ने गोदी मीडिया की भूमिका पर सवाल उठाते हुए कहा कि अल्पसंख्यकों और दलित-पिछड़ा समाज के मामले में मीडिया का जज बन जाना और पीड़ितों को अपराधी बनाकर पेश करना आम बात हो गई है।



2018 में आरटीआई कार्यकर्ता अनिल ने एक आरटीआई के ज़रिये सरकार से जो जानकारी हासिल की, उसके मुताबिक़ हर साल सैंकड़ों लोग अपने पसंद का धर्म चुनते हैं और उसको मानते हैं। इस सूचना के अनुसार अकेले महाराष्ट्र में बहुत से मुसलमानों ने हिन्दू धर्म स्वीकार किया, जबकि हिन्दुओं ने अन्य धर्मों को अपनाया।

अधिकारों पर हमला है। उन्होंने अपने ट्वीटर अकाउन्ट पर लिखा कि भाजपा देश के अल्पसंख्यकों और दलितों पर अत्याचार करने का अवसर नहीं चूकती है। जिस तरह उमर गौतम और मुफ़्ती जहांगीर को गिरफ़्तार कर सरकार ने संवैधानिक अधिकारों पर हमला किया है, वह ग़लत है। संविधान सभी नागरिकों को अपने धर्म के प्रचार-प्रसार के साथ किसी भी धर्म को अपनाने का अधिकार देता है।

दिल्ली अल्पसंख्यक आयोग के पूर्व अध्यक्ष डॉ. जफ़रुल इस्लाम ख़ान ने इस गिरफ़्तारी की आलोचना करते हुए कहा कि धर्म परिवर्तन कोई अपराध नहीं है। संविधान के अनुच्छेद 25, 26, 27 और 28 में देश के हर नागरिक को धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार है। अनुच्छेद 25 के मुताबिक़, सभी नागरिकों को अपनी पसंद के धर्म को मानने, उसका पालन करने और अपने धर्म का प्रचार करने की आज़ादी है।

मनुवादियों के दुष्प्रचार से समाज में ऐसा संदेश जाता है कि मानों सभी लोग सिर्फ़ इस्लाम ही अपना रहे हैं, जबकि ऐसा नहीं है। अन्य धर्मों के लोग संविधान प्रदत्त अपने धार्मिक आज़ादी का कई तरह से इस्तेमाल कर रहे हैं। हिन्दूवादी संगठनों की ओर से घर वापसी के नाम पर धर्म परिवर्तन कराया जाता है। 2018 में आरटीआई कार्यकर्ता अनिल ने एक आरटीआई के ज़रिये सरकार से जो जानकारी हासिल की, उसके मुताबिक़ हर साल सैकड़ों लोग अपने पसंद का धर्म चुनते हैं और उसको मानते हैं। इस सूचना के अनुसार अकेले महाराष्ट्र में बहुत से मुसलमानों ने हिन्दू धर्म स्वीकार किया, जबकि हिन्दुओं ने अन्य धर्मों को अपनाया। 10 जून 2014 से 16 जनवरी 2018 के बीच मौजूद आंकड़ों के आधार पर राज्य में कुल 1687 लोगों ने अपनी सहूलियत के अनुसार धर्म परिवर्तन किया। धर्म परिवर्तन करने वाले कुल 1687 नागरिकों में 1166 हिन्दू थे। 664 हिन्दुओं ने इस्लाम, 258 ने बौद्ध धर्म, 138 ने ईसाई, 88 ने जैन, 11 ने सिख और एक हिन्दू ने नवबौद्ध धर्म अपनाया। वहीं इस बीच कुल 263 मुसलमानों ने धर्म परिवर्तन किया, जिनमें 228 हिन्दू बने, 12 बौद्ध, 21 ईसाई और दो मुसलमानों ने जैन धर्म अपनाया। आंकड़ों के मुताबिक़ 165 ईसाइयों, 11 बौद्धों, 5 जैनियों ने भी अपना धर्म बदला।

इन आंकड़ों और सच्चाई के विपरीत मनुवादी संगठनों की ओर से दुष्प्रचार और झूठे आंकड़ों के आधार हिन्दू समाज को मुसलमानों से डराया जाता। यही भय दिखाकर इनके संगठन हर साल लाखों-करोड़ों कमाते हैं। इन संगठनों के मुखिया ऐशो-आराम से रहते हैं और पैसों का कोई हिसाब नहीं देते। वहीं राजनीतिक पार्टियां थोक के भाव वोट लेकर सत्ता की मलाई खाती हैं, इसके बदले देश के नागरिकों को भीषण महंगाई, भ्रष्टाचार, जमाख़ोरी, बेरोज़गारी, अशिक्षा आदि दल-दल में धकेल देती हैं। ■■



ज्वलंत

मुहम्मद इक़बाल
दरभंगा, बिहार

मज़बूत फैमिली सिस्टम : मुस्लिम समाज की बड़ी ताक़त

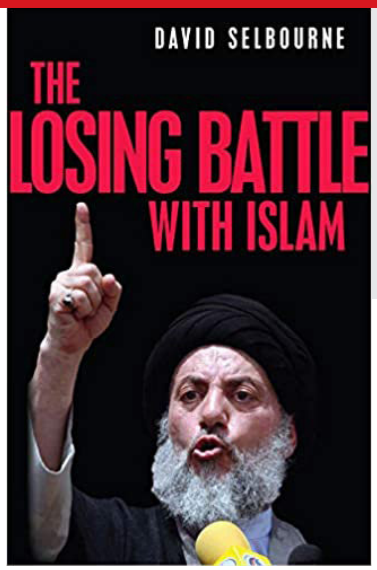

डेविड सेलबॉर्न पश्चिमी दुनिया का मशहूर लेखक है, उसने एक किताब लिखी थी "The loosing battle with islam" इस किताब में उसने लिखा कि पश्चिमी दुनिया इस्लाम से हार रही है, उसने हार के कई कारण गिनाए हैं, जिसमें इस्लाम के मज़बूत फैमिली सिस्टम को भी एक कारण बताया है।

पश्चिमी दुनिया में फैमिली सिस्टम तबाह हो चुका है, लोग शादी करना पसंद नहीं करते। समलैंगिकता, अवैध संबंध, लिव इन जैसी कुरीतियों के आम होने से फैमिली सिस्टम टूटता जा रहा है। दिन-ब-दिन ऐसे बच्चों की तादाद बढ़ती जा रही है जिन्हें मालूम नहीं होता कि उनके पिता कौन हैं, बूढ़े मां-बाप को घर में रखने को कोई तैयार नहीं होता, ओल्ड ऐज होम में उनका बुढापा गुज़रता है।

पश्चिमी समाज में ये कुछ ऐसे सामाजिक परिवर्तन आ चुके हैं जिसके नतीजे में पूरा पश्चिमी समाज तबाह होने के कगार पर पहुंच चुका है। पश्चिमी दुनिया में फैमिली सिस्टम इतनी बुरी तरह से तबाह हो चुका है कि वहां की पोलिटिकल पार्टियां फैमिली सिस्टम को बचाने का वादा अपने इलेक्शन मैनिफेस्टो में करती है। ऑस्ट्रेलिया में तो 'फैमिली फर्स्ट' नाम से एक पोलिटिकल पार्टी तक बना ली गई थी। फैमिली सिस्टम को बचाना वेस्टर्न वर्ल्ड का सबसे बड़ा मुद्दा है, क्योंकि अगर फैमिली नहीं बचेगी तो समाज भी देर-सवेर ध्वस्त हो जाएगा।

अमेरिकी इस्लामोफ़ोबिक लेखक

बिल वार्नर जो ख़ुद को पॉलिटिकल इस्लाम का क्रिटिक कहता है, उसने अपने एक हालिया प्रोग्राम में सवाल का जवाब देते हुए कहा कि अमेरिकी औरतें मुसलमानों से शादी करना पसंद करती हैं, क्योंकि ऐसा करने से उन्हें एक शौहर मिलता है, उनके बच्चों को बाप मिलता है। ये कारण अमेरिकी औरतों को मुसलमानों से शादी करने की ओर आकर्षित करते हैं।

एक दूसरे सवाल का जवाब देते हुए उसने कहा कि इस्लाम फैमिली को सभ्यता की बुनियाद मानता है और मैं इस बात से सहमत हूं, अमेरिका में बूढ़े और उम्रदराज़ लोगों के साथ बुरा व्यवहार आम बात है, लेकिन मुसलमान बूढ़े और उम्रदराज़ लोगों से अच्छा व्यवहार करते हैं चाहे वो बूढ़े और उम्रदराज़ लोग काफ़िर ही क्यों न हों।

पश्चिमी विचारक ये बात बहुत अच्छी तरह जानते हैं कि पूरी दुनिया में इस्लाम और मुस्लिम सोसाइटी में फैमिली सिस्टम सबसे बेहतर है। इस्लाम एक ऐसा इको सिस्टम डेवलप करता है जहां फैमिली सिस्टम फलता-फूलता है, जहां बच्चों की अच्छी परवरिश होती है, बूढ़ों के साथ अच्छा बर्ताव होता है।

क़ुरआन मुसलमानों को अपने मां बाप से अच्छा व्यवहार करने को कहता है–

"तुम्हारे रब ने फ़ैसला कर दिया है कि तुम लोग किसी की बन्दगी न करो मगर सिर्फ़ उस (यानी अल्लाह) की, और माता-पिता के साथ अच्छे से अच्छा व्यवहार करो। अगर उनमें से कोई एक या दोनों तुम्हारे सामने बुढ़ापे को पहुंच जाएं तो उन्हें (गुस्सा या झुंझलाहट में) 'उफ़्फ़' तक भी न कहो, न उन्हें झिड़को, बल्कि उनसे शिष्टतापूर्वक बात करो। और उनके आगे दयालुता व नम्रता की भुजाएं बिछाए रखो, और दुआ किया करो कि ''मेरे रब। जिस तरह से उन्होंने मुझे बचपने में (दयालुता व ममता के साथ) पाला-पोसा है, तू भी उन पर दया कर।" (क़ुरआन, 17-23,24)

इस्लाम पति-पत्नी के बीच पारिवारिक सम्बन्ध को सन्तुष्टि, प्रेम, सहानुभूति दोनों के अधिकार एवं दायित्व और परंपरा के अनुसार मिल-जुलकर साथ रहने के नियम पर बल देता है।

"उनके संग भले ढंग से रहो-सहो। अगर वे तुम्हें पसन्द न हों तो हो सकता है कि एक चीज़ तुम्हें पसन्द न हो मगर अल्लाह ने उसी में बहुत कुछ भलाई रख दी हो।" (क़ुरआन, 4:19)

क़ुरआन और हदीस में इस्लाम की विस्तृत और स्पष्ट शिक्षाएं मुसलमानों को इस बात का आदेश देती हैं कि वो अपने बच्चों, बीवी, मां-बाप और रिश्तेदारों के साथ अच्छा सुलूक करे, उनका ख़याल रखे, इसके बदले में वो आख़िरत में बेहतर इनाम का हक़दार बनेंगे।

आख़िरत की कामयाबी को हासिल करने की प्रेरणा मुसलमानों को अच्छा बर्ताव करने के लिए प्रेरित करती है जिसके फलस्वरूप अच्छी फैमिली और अच्छे समाज का निर्माण होता है, जिसमें सुकून, राहत और ख़ुशी होती है, जो फैमिली और सोसाइटी को स्थायित्व देता है।

यही वजह है कि डेविड सेलबॉर्न और बिल वार्नर जैसे लेखक भी ये कहने पर मजबूर हो जाते हैं कि इस्लाम के मज़बूत फैमिली सिस्टम की वजह से पश्चिम देर-सवेर इस्लाम से हार जाएगा।

हालिया दिनों में मलाला यूसुफ़जई का बयान काफ़ी चर्चा में रहा जिसमें उसने कहा कि शादी करना ज़रूरी नहीं है। ये बयान दरअस्ल समाज की बुनियादों पर प्रहार है, क्योंकि अगर इन्सान शादी नहीं करेगा तो फैमिली नहीं बनेगी और न ही समाज का निर्माण हो पाएगा।

मलाला यूसुफ़जई को वेस्ट ने खड़ा किया है तो अपने फ़ायदे के लिए इस्तेमाल भी करेगा और करता रहता है। मलाला हों या उसके समर्थक हों, उन सबका टारगेट इस्लाम और मुस्लिम समाज में मौजूद मज़बूत फैमिली सिस्टम को तोड़ना और ख़त्म करना है। शादी पर दिया गया मलाला का हालिया बयान उसी सिलसिले की कड़ी है।

मलाला और उनके समर्थक

दरअस्ल सभ्यताओं की जंग में पश्चिम के प्यादे हैं, उनके एजेंट हैं, जो सभ्यताओं की जंग में पश्चिम की हारती हुई बाज़ी को जीत में बदलने के लिए फड़फड़ा रहे हैं। ■■

पश्चिमी विचारक ये बात बहुत अच्छी तरह जानते हैं कि पूरी दुनिया में इस्लाम और मुस्लिम सोसाइटी में फैमिली सिस्टम सबसे बेहतर हैं, इस्लाम एक ऐसा इको सिस्टम डेवलप करता है जहां फैमिली सिस्टम फलता-फूलता है, जहां बच्चों की अच्छी परवरिश होती है, बूढ़ों के साथ अच्छा बर्ताव होता है।

इतिहास के
झरोखे
से

अशफ़ाक़ ख़ान
सवाई माधोपुर,
राजस्थान



अफ़ग़ानिस्तान : अंतहीन वैश्विक साम्राज्यों का श्मशान

इतिहास मानव सभ्यता व साम्राज्यों के लिए एक सीख भी होता है और संदेश भी। यदि इतिहास से मुंह फेर लिया जाए तो वर्तमान भी असफलताओं की अंतहीन गाथा बन जाता है। लगभग ऐसी ही अंतहीन कहानियां पड़ोसी देश अफ़ग़ानिस्तान के अतीत के गर्भ में है और अब एक नई दास्तान की इबारत भी गढ़ी जा रही है, जिसके लिए अफ़ग़ानिस्तान की वैश्विक पटल पर पहचान है, यानी साम्राज्यवादियों और आक्रांताओं के लिए कड़े पराजय का अनुभव।

अफ़ग़ानिस्तान मध्य एशिया का ऐसा देश जो भू-आबद्ध (Landlock) है तथा सामरिक व व्यापारिक कारकों से बहुत महत्वपूर्ण है। ये पश्चिम एशिया को न सिर्फ़ दक्षिण एशिया से जोड़ता है अपितु हिंद महासागर व अरब सागर में आने के लिए प्रवेश द्वार भी है। यही कारण है कि मानव इतिहास में पिछले हज़ारों वर्षों से इसे अपने साम्राज्य में शामिल करने व यहां की प्राकृतिक संसाधनों से लाभ उठाने की इच्छा हर वैश्विक महाशक्ति की रही है। मगर ये संयोग है कि अफ़ग़ानिस्तान पर जितने भी आक्रमण हुए वे यहां पैर जमाने में हर बार असफल ही हुए। ईसा पूर्व से अब तक दुनिया कई राजनीतिक व्यवस्थाओं

की साक्षी रही है, कभी राजशाही, तो कभी तानाशाही, कभी साम्यवादी शासन, तो कभी लोकतंत्र। इन सभी ने अफ़ग़ानिस्तान की ओर रुख़ तो किया लेकिन परिणाम सदैव अफ़ग़ानिस्तान के 'स्वाभिमान' और बाहरी अस्वीकरण के पक्ष में ही रहे।

अफ़ग़ानिस्तान पर बाह्य ताक़तों के अतिक्रमण का इतिहास तो ईसा पूर्व से ही प्रारंभ हो जाता है। लेकिन अधिकतम जानकारी यहां सिकंदर के असफल होने, परसियन साम्राज्य का अंग होने व सासानी सत्ता से जुड़े होने की ही मिलती है। इसके पश्चात् इस्लाम की छत्रछाया अफ़ग़ानिस्तान पर भी पड़ी। इस दौरान अफ़ग़ानिस्तान सीरियाई शासन का भाग रहा। यानी 1000 साल में अफ़ग़ानिस्तान पर विभिन्न वैश्विक शक्तियों व धार्मिक समूहों का प्रभाव पड़ा लेकिन एक क्षेत्र व यहां के रहने वाले विभिन्न नस्लीय समूहों के विचित्र चरित्र में विशेष परिवर्तन नहीं हुआ जो आज भी विद्यमान है।

ब्रिटिश राज के नाम पहली हार

आधुनिक काल में भी अफ़ग़ानिस्तान औपनिवेशिक ताक़तों की गिद्ध दृष्टि से अछूता नहीं रहा। भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी के आगमन के समय से ही ये दो तत्कालीन महाशक्तियों के प्रभाव केन्द्र में रहा है।

भारत में राज कर रहे ब्रिटिश शासन सदैव अफ़ग़ानिस्तान की स्थिति को लेकर दुश्चिंताओं में रहा। वो हर रूप में भारत में अपने प्रभुत्व से कोई समझौता करने को तैयार नहीं था। साथ ही उसे ये भी डर था कि उसकी समांतर महाशक्ति सोवियत रूस भू-मध्यसागरीय रणनीतियों को आधार बनाकर दक्षिण एशिया में कभी भी आक्रमण कर सकता है एवं अफ़ग़ानिस्तान पर क़ब्ज़ा कर ब्रिटिश साम्राज्य के लिए चुनौती बन सकता है। वो अभी इसी दुविधा में था कि अफ़ग़ानिस्तान में सत्तासीन अब्दाली वंश के शासक शाह शुजा दुर्रानी को बग़ावत का सामना करना पड़ा। उसे शरण लेने के लिए भारत में पनाह लेनी पड़ी। ये उस विवाद का आरंभ था जो 19वीं सदी के ग्रेट गेम के नाम से प्रचलित हुआ।

इसी दौरान सोवियत रूस और चीन के मध्य समझौता हुआ, जिसे



फारवर्ड पॉलिसी कहा जाता है। साथ ही अफ़ग़ानिस्तान में एक ऐसे शासन की शुरुआत हुई, जिसका झुकाव ब्रिटिश शासन की महत्वाकांक्षाओं के विपरीत था। इस समय के शासक दोस्त मुहम्मद से ब्रिटिश शासन ने बार-बार प्रयास किया कि वो उनके अनुरूप विदेश नीति को आकार दे, ताकि क्षेत्र में स्थिरता बरक़रार रह सके। लेकिन दोस्त मुहम्मद ने बदले में पेशावर क्षेत्र की मांग रखी, जो उस समय अविभाजित पंजाब प्रांत का हिस्सा था।

कहा जाता है कि इस समय मशहूर-ए-ज़माना कोहिनूर हीरा भी रणजीत सिंह के पास था, जो शाह शुजा अफ़ग़ानिस्तान से भागते समय अपने साथ ले आया था। अंततः ईस्ट इंडिया कंपनी ने तय किया कि वो शाह शुजा दुर्रानी को सत्ता पर बिठाये, जो भारत की राजनीतिक शरण में था। सन् 1839 के मार्च माह में ब्रिटिश व पंजाब शासन ने संयुक्त रूप से अफ़ग़ानिस्तान पर हमला किया। जिसे प्रथम आंग्लो-अफ़ग़ान युद्ध भी कहा जाता है। लगभग 15,000 सैनिकों के साथ ब्रिटिश सरकार ने जनरल ऑकलैंड के निर्देश पर अफ़ग़ानिस्तान की ओर चढ़ाई की और मात्र कुछ ही दिनों में अफ़ग़ानिस्तान के प्रमुख शहरों कंधार व ग़ज़नी पर क़ब्ज़ा कर वहां के शासक दोस्त मुहम्मद को सत्ता से बेदख़ल कर दिया। सन् 1840 में अफ़ग़ानिस्तान के नए अमीर शाह शुजा गद्दी पर बैठे, जो एक पूर्व नियोजित समझौता के तहत ब्रिटिश शासन के कठपुतली मात्र थे। इस तात्कालिक व ख़्याली जीत के पश्चात तो अफ़ग़ानिस्तान ब्रिटिश सरकार के लिए एक पर्यटन स्थल बन गया था। अभी ब्रिटिश पूरी तरह रूसोफोबिया से उभर ही रहे थे कि आख़िर वही हुआ जिसकी कल्पना किसी ने नहीं की थी। कुछ ही महीनों के बाद अपदस्थ अमीर दोस्त मुहम्मद ने स्थानीय लोगों को स्वाभिमान व मातृभूमि की क़सम दिलाकर ब्रिटिश सेना पर हमला कर दिया। हमले की भीषणता का आलम ये था कि लगभग सभी ब्रिटिश सैनिकों को मौत के घाट उतार दिया गया और एक सैनिक को ब्रिटिश अधिकारियों के पास भारत भेजा गया ताकि वो अपनी पराजय की दुर्दांत पटकथा सुना सके। ये सब ब्रिटिश शासन के लिए किसी डरावने सपने से कम नहीं था। इसके बाद ब्रिटिश शासन ने लगभग 40 साल तक अफ़ग़ानिस्तान की ओर देखना भी उपयुक्त नहीं समझा।

भारत में एक छत्र राज कर रहे ब्रिटिश शासन कब तक अफ़ग़ानिस्तान के सामरिक व भू-राजनीतिक महत्व को अनदेखा कर सकता था और सोवियत रूस भी एशिया और इसकी सामुद्रिक प्रासंगिकता के बिना नहीं रह सकता था। सोवियत रूस ने 1878 ईस्वी में अपना एक दूत भेजकर अफ़ग़ानिस्तान के तत्कालीन शासक शेर अली से मधुर संबंध बनाना ही चाहा कि ब्रिटिश सरकार ने स्थिति भांपकर पुनः अफ़ग़ानिस्तान पर हमला कर दिया व शेर अली के स्थान पर याक़ूब ख़ान को नए अफ़ग़ान अमीर के तौर पर नियुक्त कर दिया। इसे द्वितीय आंग्लो-अफ़ग़ान युद्ध की मान्यता मिली लेकिन इसी दौरान वहां मौजूद ब्रिटिश सरकार के राजनीतिक प्रतिनिधि की हत्या कर उसे इतिहास याद करने के तौर पर एक संदेश-सा मिल गया था। इसके बाद ब्रिटिशर्स ने पूर्व अनुभवों की भयावहता याद कर अफ़ग़ानिस्तान से निकलकर इस बार ड्यूरेंड लाईन नामी सीमा भारत व अफ़ग़ानिस्तान के बीच में खींच दी ताकि भविष्य में उसे कोई ख़तरा अफ़ग़ानिस्तान के रास्ते से अपने शासन क्षेत्र भारत में न हो।

आख़िरकार प्रथम विश्व युद्ध के समय अफ़ग़ानिस्तान एक स्वतंत्र देश के रूप में अस्तित्व में आया। इस तरह एक वैश्विक साम्राज्य उस कड़ी में जुड़ गया जिसे अफ़ग़ानिस्तान में असफलता की नियति ही हाथ लगी हो।

इतिहास के बारे में कहा जाता है कि ये अपने आपको दोहराता है और लगता है इसकी पुष्टि हर बार अफ़ग़ानिस्तान ही करता है। सैकड़ों वर्षों तक दुनिया की ताक़तों का संघर्ष क्षेत्र रहे अफ़ग़ानिस्तान का आचरण दुनिया से भिन्न है। आश्चर्य की बात है कि आधुनिक दुनिया में किसी के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप को अवैध और अनैतिक समझा जाता है, लेकिन अफ़ग़ानिस्तान में ऐसे आक्रमणों को अहिंसा की संज्ञा दी जाती है।

अफ़ग़ानिस्तान के हाथों सोवियत रूस का विघटन

दुनिया के लगभग एक तिहाई से अधिक भू-भाग पर मौजूद साम्राज्य ने अफ़ग़ानिस्तान की ओर आक्रमण करते समय शायद ये नहीं सोचा होगा कि युद्ध के अंत तक विश्व मंच पर उसकी राजनीतिक भूमिका ही समाप्त हो जाएगी। प्रथम विश्व युद्ध में अफ़ग़ानिस्तान तटस्थ ही रहा लेकिन शीत युद्ध में अमेरिका की तरफ़ झुकाव ने सोवियत रूस की चिंता बढ़ा दी, क्योंकि इस समय अफ़ग़ानिस्तान और तत्कालीन सोवियत रूस के बीच लंबा सीमाई

जुड़ाव था। दूसरा कारण अफ़ग़ानिस्तान में एक ऐसा शासक विराजमान हुआ जो साम्यवादी विचारधारा को अधिक महत्व नहीं देता था। ऐसे में सोवियत रूस ने अफ़ग़ानिस्तान पर सीधा हस्तक्षेप सन् 1979 में कर वहां के शासक अमीन ख़ान को सत्ता से बेदख़ल कर दिया और साम्यवादी विचारधारा के व्यक्ति बरबक करमाल को देश की बागडोर सौंप दी। जिसकी लोकप्रियता भी नग्णय थी। शीत युद्ध चरम था, ऐसे में अमेरिका अफ़ग़ानिस्तान में किसी साम्यवादी दल के इस तरह शीर्ष पर होना कैसे सहन कर सकता था? हालांकि वहां मौजूद अन्य धार्मिक व आदिवासी समूह भी सोवियत रूस के इस बर्ताव से बरहम हो चुके थे।

एक ऐसे देश में जहां लगभग शत-प्रतिशत आबादी धार्मिक प्रवृत्ति की हो, वहां साम्यवादी शासन के सहारे कब तक व्यवस्था चलाई जा सकती थी? सोवियत रूस ने जिस विचारधारा के आधार के अफ़ग़ानिस्तान पर हमला किया, अब एक ऐसी ही धार्मिक विचारधारा उसके प्रतिशोध के लिए तैयार थी। अफ़ग़ानिस्तान के जिन धार्मिक समूहों को हथियार व आर्थिक सहायता की आवश्यकता थी उसकी भरपाई अमेरिका ने की, जबकि इस दौरान अफ़ग़ानिस्तान में लामबंद हो रहे विभिन्न नस्लीय समूहों ने संगठित होकर मुजाहिदीन की परिकल्पना देकर सोवियत रूस के ख़िलाफ़ मोर्चा खोल दिया।

मुजाहिदीन को मानव संसाधन की आवश्यकता को दुनिया भर से आये मुसलमानों ने पूरा किया, अब ये विवाद सत्ता और शासन से परे धार्मिक युद्ध के रूप में धारण हो चुका था। आख़िरकार सोवियत रूस की हार हुई और कुछ ही समय बाद दुनिया का सबसे बड़ा साम्राज्य का ख़ात्मा विश्व मानचित्र पर 15 देशों के उद्भव के साथ हुआ।

एक और महाशक्ति की पराजय

1992 वो दौर था, जब पहली बार अफ़ग़ानिस्तान के लोगों की अकांक्षाओं को परिभाषित करने वाला शासन स्थापित हुआ। ऐसी सरकार जो अन्य किसी बाहरी शक्ति से पूरी तरह मुक्त और स्वायत थी। इन सालों में अफ़ग़ानिस्तान में तालिबान का शासन रहा, हालांकि इस सरकार को लेकर अमेरिका अधिक चिंतित नहीं था, क्योंकि वह तालिबान को हितैषी के रूप में देखता था। लेकिन तालिबान का अपने देश में शरीयत के लागू करते ही पश्चिमी देशों में अलग तरह की बहस ने जन्म लिया। ये उसे भविष्य में ख़तरे और बड़े वैचारिक मतभेद, आर्थिक नीतियों के घाटे के रूप में देखने लगे। पश्चिम देशों विशेषकर अमेरिका को एक ऐसे बहाने की तलाश थी, जिसके आधार पर तालिबान को भी सत्ता से दूर कर दिया जाए। इसी समय अमेरिका में 9/11 का हमला हुआ, जिसमें हज़ारों अमेरीकियों की जान गई। इसी आपदा को अमेरिका ने अवसर समझ कर तालिबान सरकार पर आरोप लगाया कि वो ओसामा बिन लादेन को शरण दिए है, जो इस हमले में संलिप्त है। अमेरिका ने इसे आतंकी हमला क़रार देकर दुनिया भर से सहानुभूति जुटाई और आत्म-रक्षा की आड़ में अफ़ग़ानिस्तान पर हमला कर दिया।

अक्टूबर 2002 में अमेरिका की लगभग 1 लाख सेना ने नाटो सहयोगियों व अफ़ग़ानिस्तान के कुछ तालिबान विरोधी समूहों के साथ मिलकर अफ़ग़ानिस्तान पर धावा बोल दिया। इसके बाद तालिबान काबुल से निकलकर पहाड़ों में चले गए। ये अमेरिका के लिए वियतनाम का दोहराव था, तो अफ़ग़ानिस्तान के लिए अनचाही परंपरा का हिस्सा। अब लगभग दो दशक बाद अमेरिका भी पूरी तरह अफ़ग़ानिस्तान से छोड़कर जाने के लिए आतुर है। अमेरिका ने भी वो स्वाद चख लिया था, जो पूर्व में कई अन्य वैश्विक साम्राज्य ने अनुभव किया था। युद्ध में अमेरिका को लगभग 3 ट्रिलियन डॉलर खर्च करने पड़े, वो विश्व के कई देशों की जीडीपी से भी अधिक है। हज़ारों सैनिकों की मौत हुई, कई स्थाई रूप से विकलांग बन गए तो इतने ही मानसिक रोगी और इन सबके बीच लाखों मासूम अफ़ग़ानियों की मौत और अंतहीन अशांति के भंवर में फंसी हुई कई पीढ़ियां।

इतिहास के बारे में कहा जाता है कि ये अपने आपको दोहराता है और लगता है इसकी पुष्टि हर बार अफ़ग़ानिस्तान ही करता है। सैकड़ों वर्षों तक दुनिया की ताक़तों का संघर्ष क्षेत्र रहे अफ़ग़ानिस्तान का आचरण दुनिया से भिन्न है। आश्चर्य की बात है कि आधुनिक दुनिया में किसी के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप को अवैध और अनैतिक समझा जाता है, लेकिन अफ़ग़ानिस्तान में ऐसे आक्रमणों को अहिंसा की संज्ञा दी जाती है। गुणवत्तापूर्ण जीवन जीने और एक लोकतांत्रिक सरकार का चुनाव करने का अधिकार अफ़ग़ानिस्तान की अवाम से छीनने की अनंत कोशिशें हुई हैं। जो अभी तक जारी है।

आशा है कि दुनिया अफ़ग़ानिस्तान को अब ख़ुद की तस्वीर और तक़दीर बनाने का अवसर देगी, जिसके लिए वो सदियों से योजनाबद्ध तरीक़े से वंचित किए गए हैं।

■■

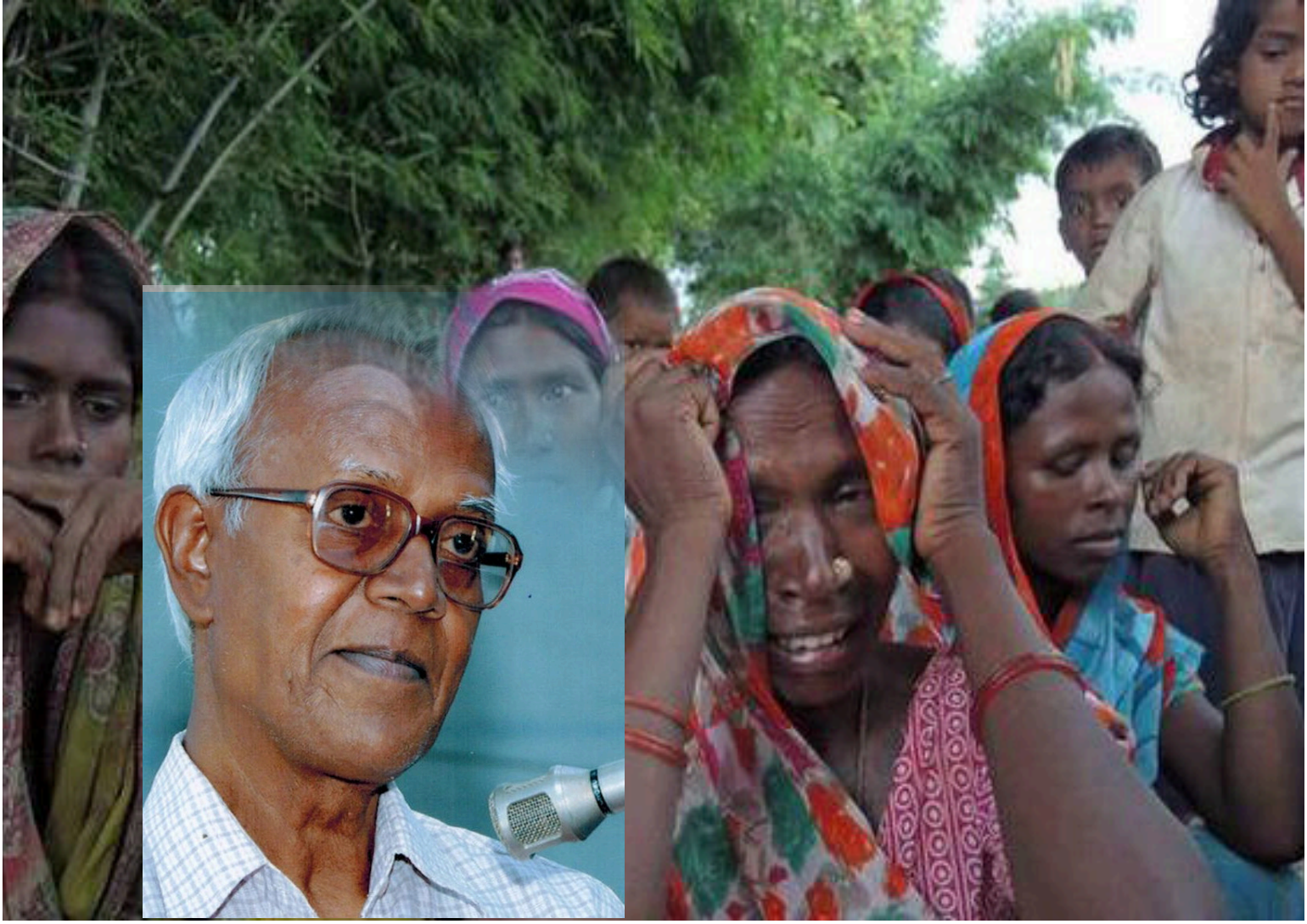

आदिवासी अधिकारों के लिए लड़ने वाले बुज़ुर्ग स्टैन स्वामी की मौत पर विमर्श

ऐसा क्यों होता है कि कोई सरकार और सुरक्षा एजेंसियां किसी 84 वर्षीय वृद्ध व्यक्ति को देश की सुरक्षा के लिए ख़तरा मानने लगती हैं? फिर सामाजिक कार्यकर्ता इन आरोपों को बेबुनियाद बताने लगते हैं, मगर उसी बीच उस व्यक्ति की मौत, लोकतंत्र, सरकार और सुरक्षा एजेंसियों के रवैये पर नया विमर्श खड़ा कर देती है।

हाल ही में आदिवासियों के अधिकार के लिए ताउम्र लड़ने वाले और भीमा कोरेगांव हिंसा से जुड़े मामले

न्याय



मसीहुज़्ज़मा अंसारी
इंडिया टुमारो

में आरोपी 84 वर्षीय फादर स्टेन स्वामी का निधन हो गया। मुंबई के होली फैमिली हॉस्पिटल में उनका इलाज चल रहा था। जिस दिन उनका देहांत हुआ उसी दिन उनकी ज़मानत याचिका पर सुनवाई होनी थी। जांच एजेंसी एनआईए ने स्टैन स्वामी पर 2018 के भीमा कोरेगांव हिंसा मामले में शामिल होने और नक्सलियों के साथ संबंध होने के आरोप लगाए थे। उन पर ग़ैर-क़ानूनी गतिविधि (रोकथाम) अधिनियम (यूएपीए) के तहत भी मामला दर्ज किया गया था। एनआईए ने यह भी आरोप



लगाया था कि स्टेन स्वामी प्रतिबंधित संगठन सीपीआई (माओवादी) के सदस्य हैं।

स्टेन स्वामी भारत में सबसे बुज़ुर्ग व्यक्ति थे जिन पर आतंकवाद का आरोप लगाया गया। वह पार्किंसन की बीमारी से पीड़ित थे। उनकी कई ज़मानत याचिका ख़ारिज कर दी गई थी।

मौत को लेकर छिड़ा विमर्श

फ़ादर स्टैन स्वामी की मौत के बाद राजनीतिज्ञों, समाजसेवियों, बुद्धजीवियों और मानवाधिकार कार्यकर्ताओं ने उनकी मौत को लेकर सवाल उठाया है। एक 84 वर्षीय आदिवासी अधिकारों के लिए लड़ने वाले बुज़ुर्ग को गिरफ़्तार करना और हिरासत में रखने को लेकर लगातार बहस होती रही मगर अंततः उनकी मौत के बाद लोगों में आक्रोश देखने को मिला। बताया जा रहा कि दलितों और आदिवासियों के अधिकारों के लिए लड़ने वाले व्यक्ति को निशाना बनाया गया, क्योंकि उनका सवाल उठाना और उठाते रहना सरकार को पसंद नहीं था।

उनके निधन पर राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकार संगठनों और विभिन्न संस्थाओं ने दुख व्यक्त करते हुए अपनी प्रतिक्रियाएं दर्ज कराई हैं। यूएन ह्यूमन राइट्स कमीशन के प्रवक्ता ने फ़ादर स्टेन स्वामी की मौत पर दुख प्रकट करते हुए भारत सरकार से अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकारों को सुनिश्चित करने को कहा है। कमीशन ने भारत में मानवाधिकार कार्यकर्ताओं को हिरासत में लेने पर भी चिंता ज़ाहिर की। विभिन्न राजनीतिक पार्टियों के नेताओं ने स्टेन स्वामी की गिरफ़्तारी और उनकी मौत को लेकर सरकार को घेरा। कई ने गिरफ़्तारी को राष्ट्रीय अपमान और उनकी मौत को हत्या क़रार दिया है।

शिवसेना सांसद संजय राउत ने पार्टी के मुखपत्र 'सामना' में मोदी सरकार पर निशाना साधते हुए कहा है कि स्टेन स्वामी की 'जेल में हत्या हुई'।

उन्होंने कहा कि, "यह सिर्फ़ अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को दबाने की एक साज़िश थी। क्या जंगलों में आदिवासी लोगों को उनके अधिकारों और स्वतंत्रता के प्रति जागरूक करने का मतलब देश को उखाड़ फेंकने की साज़िश है?"

राहुल गांधी ने स्टेन स्वामी की मौत पर दुख प्रकट करते हुए उन्हें न्याय और मानवता का पक्षधर बताया है। वहीं इतिहासकार रामचन्द्र गुहा ने उनकी मौत को 'त्रासदी' और 'ज्यूडिशियल मर्डर' कहा है। पूर्व मंत्री और टीएमसी नेता यशवंत सिन्हा ने उनकी मौत को "हत्या" क़रार दिया है।

क्या है भीमा कोरेगांव का इतिहास?

महाराष्ट्र के पुणे में स्थित भीमा कोरेगांव में अंग्रेज़ों की महार रेजीमेंट और पेशवा की सेना के बीच हुई लड़ाई में महार रेजीमेंट की जीत हुई थी। महारों को अछूत माना जाता था। भीमा कोरेगांव की लड़ाई एक जनवरी, 1818 को ईस्ट इंडिया कंपनी की सेना

शिवसेना सांसद संजय राउत ने पार्टी के मुखपत्र 'सामना' में मोदी सरकार पर निशाना साधते हुए कहा है कि स्टेन स्वामी की 'जेल में हत्या हुई'। उन्होंने कहा कि, "यह सिर्फ़ अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को दबाने की एक साज़िश थी। क्या जंगलों में आदिवासी लोगों को उनके अधिकारों और स्वतंत्रता के प्रति जागरूक करने का मतलब देश को उखाड़ फेंकने की साज़िश है?"

और पेशवा के नेतृत्व वाली मराठा सेना के बीच हुई थी। इस लड़ाई में मराठाओं की हार हुई और ईस्ट इंडिया कंपनी की महार रेजिमेंट को इसका श्रेय मिला था। महार समुदाय को उस समय महाराष्ट्र में अछूत समझा जाता था। हर साल हज़ारों दलित पुणे के भीमा कोरेगांव में स्थित वॉर मेमोरियल पर इकट्ठा होते हैं, क्योंकि इस जगह को दलित अपने लिए पवित्र मानते हैं। सन् 1927 में भीमराव अम्बेडकर ने इस वॉर मेमोरियल का दौरा किया और उन दलित सैनिकों को श्रद्धांजलि दी। तब से महार समुदाय ने अगड़ी जाति के पेशवाओं पर मिली जीत की याद में इस दिन को मनाना शुरू किया। प्रत्येक वर्ष यहां विशेष समारोह आयोजित किए जाते हैं और देश भर से हज़ारों लोग इसमें शामिल होते हैं।

भीमा कोरेगांव हिंसा मामला

साल 2018 में भीमा कोरेगांव की लड़ाई के दो सौ साल पूरे हो रहे थे। इस मौक़े पर आयोजन के लिए काफ़ी संख्या में लोग पहुंचे थे। पहली जनवरी को भीमा नदी के किनारे स्थित मेमोरियल के पास लोग अपने नायकों को याद करते हुए उन्हें श्रद्धांजलि देने इकट्ठा होने लगे तभी अचानक हिंसा भड़क उठी। पत्थरबाज़ी हुई और भीड़ ने दर्जनों गाड़ियों को आग के हवाले कर दिया।

भीमा कोरेगांव में 2018 में हुई हिंसा के सिलसिले में कई वामपंथी कार्यकर्ताओं और बुद्धिजीवियों को गिरफ़्तार किया गया, हालांकि घटना के साढ़े तीन साल बीत जाने के बाद भी पुलिस अब तक कोई आरोप साबित नहीं कर सकी है।

कौन थे स्टेन स्वामी?

स्टैनिस्लॉस लोर्दूस्वामी उर्फ़ फादर स्टेन स्वामी एक रोमन कैथोलिक पादरी थे। जन्म 26 अप्रैल 1937 को तमिलनाडु के तिरुचिरापल्ली में हुआ था। उन्होंने थियोलॉजी और मनीला विश्वविद्यालय से 1970 के दशक में समाजशास्त्र में स्नातकोत्तर की पढ़ाई की। उन्होंने ब्रसेल्स में भी पढ़ाई की। उन्होंने 1975 से 1986 तक बेंगलुरू स्थित इंडियन सोशल इंस्टीट्यूट के निदेशक के तौर पर काम किया।

स्टेन स्वामी ने 1990 के दशक से ही झारखंड के आदिवासियों और वंचितों के अधिकारों के लिए काम करना शुरू कर दिया। जेलों में बंद आदिवासी युवाओं की रिहाई के लिए उन्होंने काम किया। उन्होंने हाशिये पर रहने वाले उन आदिवासियों के लिए भी काम किया, जिनकी ज़मीन का बांध, खदान और विकास के नाम पर बिना उनकी सहमति के अधिग्रहण कर लिया गया था। फादर स्टेन स्वामी झारखंड आर्गेनाइज़ेशन अगेंस्ट यूरेनियम रेडियेशन से भी जुड़े थे। इस संस्था ने 1996 में यूरेनियम कॉरपोरेशन के ख़िलाफ़ आंदोलन चलाया था, जिसके बाद चाईबासा में बांध बनाने का काम रोक दिया गया था।

इंडियन सोशल इंस्टीट्यूट से 1986 में सेवानिवृत्त होने के बाद स्टेन स्वामी चाईबासा में ही जाकर रहने लगे और वहां वे आदिवासी अधिकारों के लिए काम करने लगे।

साल 2010 में फ़ादर स्टेन स्वामी की 'जेल में बंद क़ैदियों का सच' नामक किताब प्रकाशित हुई, जिसमें बताया गया था कि किस प्रकार आदिवासी नौजवानों को नक्सली होने के झूठे आरोपों में जेल में डाला गया।

2014 में उन्होंने एक रिपोर्ट तैयार की जिसमें यह दावा किया गया था कि नक्सली होने के नाम पर हुई तीन हज़ार गिरफ़्तारियों में से 97 प्रतिशत मामलों में आरोपी का नक्सल आंदोलन से कोई संबंध नहीं था।

अपने अध्ययन स्टेन स्वामी ने यह भी बताया कि झारखंड की जेलों में बंद विचाराधीन क़ैदियों में 31 प्रतिशत आदिवासी हैं और उनमें भी अधिकतर ग़रीब आदिवासी।

फ़ादर स्टेन स्वामी की मौत पर लोगों की प्रतिक्रियाएं–

स्टेन स्वामी की मौत पर कांग्रेस के पूर्व अध्यक्ष राहुल गांधी ने संवेदना

जताते हुए ट्वीट किया कि "वे न्याय और मानवता के हक़दार थे।"

पूर्व केंद्रीय वित्त मंत्री और टीएमसी नेता यशवंत सिन्हा ने उनकी मौत को "हत्या" बताते हुए लिखा कि "हम जानते हैं कि कौन ज़िम्मेदार है।"

प्रख्यात इतिहासकार रामचंद्र गुहा ने फ़ादर स्टेन स्वामी के निधन को एक 'त्रासदी' बताया है। रामचंद्र गुहा ने ट्विटर पर लिखा है, "उनकी मौत ज्यूडिशियल मर्डर का केस है जिसके लिए गृह मंत्रालय और कोर्ट संयुक्त रूप से जवाबदेह हैं।" रामचंद्र गुहा ने कहा कि, "फ़ादर स्टेन स्वामी पूरी ज़िंदगी वंचितों के लिए काम करते रहे।"

केरल के मुख्यमंत्री पिनराई विजयन ने कहा, "इंसाफ के साथ इस तरह के उपहास की हमारे लोकतंत्र में कोई जगह नहीं होनी चाहिए।"

माकपा महासचिव सीताराम येचुरी ने फ़ादर स्टेन स्वामी के निधन पर दुख प्रकट करते हुए लिखा है कि, "बग़ैर किसी आरोप के यूएपीए लगाकर अक्तूबर 2020 से हिरासत में अमानवीय व्यवहार किया गया। हिरासत में हुई इस हत्या की जवाबदेही ज़रूर तय की जानी चाहिए।"

वरिष्ठ पत्रकार राजदीप सरदेसाई ने लिखा, "एक ताक़तवर भारतीय राज्य ने यूएपीए के तहत एक 84 वर्षीय बुज़ुर्ग को इसलिए गिरफ़्तार किया, क्योंकि अपना जीवन आदिवासियों के बीच काम करते हुए बिताने के लिए उसने उन्हें आतंकवादी के रूप में देखा।"

वहीं वरिष्ठ पत्रकार, संपादक और मीडिया के सवर्णवादी चरित्र पर शोध पुस्तक लिखने वाले अनिल चमड़िया ने कहा है– "भारत में दलित आदिवासी के लिए काम करने वाले शख़्स को जीवित नहीं छोड़ा जाता है। हालांकि आपको दलित नेता आदिवासी नेता बहुत मिलेंगे, लेकिन दलित आदिवासियों के लिए जीने मरने वाले लोग बहुत कम मिलेंगे। सत्ता के निगाह में ऐसे लोग हमेशा खटकते हैं। इतिहास में आपको ऐसी असंख्य घटनाएं मिलेंगी कि उन्हें ज़िंदा ही नहीं रहने दिया गया।"

वरिष्ठ पत्रकार उर्मिलेश लिखते हैं– "स्टेन स्वामी नहीं रहे! लेकिन यह उनकी स्वाभाविक मौत नहीं, एक तरह की हत्या है, सिस्टम के हाथों हत्या! 84 साल के आदमी को महामारी के दौर में

माकपा महासचिव सीताराम येचुरी ने फ़ादर स्टेन स्वामी के निधन पर दुख प्रकट करते हुए लिखा है, "बग़ैर किसी आरोप के यूएपीए लगाकर अक्तूबर 2020 से हिरासत में अमानवीय व्यवहार किया गया। हिरासत में हुई इस हत्या की जवाबदेही ज़रूर तय की जानी चाहिए।"

किसी सबूत के बग़ैर लगातार जेल में रखना कितना बड़ा गुनाह है! भारत अब ऐसे व्यवस्थागत-गुनाहों का ख़तरनाक द्वीप बनता जा रहा है! अफ़सोस, स्वामी साहब, आपने ग़रीब लोगों को न्याय दिलाने के लिए आजीवन संघर्ष किया पर लोकतांत्रिक कहे जाने वाले इस मुल्क के सिस्टम ने आपके साथ सरासर अन्याय किया! आपसे कभी मिलना नहीं हुआ, लेकिन काफ़ी सुन रखा था। सलाम और श्रद्धांजलि।"

वरिष्ठ पत्रकार दिलीप मंडल ने लिखा है–"भीमा कोरेगांव में हिंसा करने वाला आतंकवादी मनोहर कुलकर्णी भिड़े बाहर घूम रहा है और सरकार इस केस में झारखंड में आदिवासियों के लिए आंदोलन करने वाले 84 साल के बुज़ुर्ग स्टेन स्वामी को पकड़ लाती है। सही इलाज न मिल पाने के कारण बीमार स्टेन स्वामी मारे जाते हैं। उनके ऊपर आरोप कभी सिद्ध नहीं हुआ। इतिहास में इस मृत्यु को हत्या के तौर पर दर्ज किया जाएगा, जिसमें दोषी मोदी सरकार और न्यायपालिका है। सरकार और न्यायपालिका ने 84 साल के वृद्ध बीमार, चलने-फिरने से लाचार, आदिवासी अधिकारों के समर्थक स्टेन स्वामी को बिना दोष सिद्ध हुए, जेल में सड़ाकर मार डाला। लानत है।"

प्रसिद्ध नाटककार राजेश कुमार लिखते हैं– "फ़ादर स्टेन स्वामी के निधन के समाचार सुनकर मुझे क्या, किसी को भी दुःख से ज़्यादा गुस्सा आएगा और गुस्सा आए भी क्यों नहीं? यह एक महज़ मौत नहीं है, एक संवेदनहीन सरकार द्वारा की गई हत्या है और इसमें केवल सरकार ही नहीं, कई लोग शामिल हैं। पूरा सिस्टम इस षड्यंत्र में शामिल है। सबने मिलकर, घेर कर मारा है। बहाना भले कुछ और दे दें। अस्ल में उन्हें बर्दाश्त नहीं है कि कोई आदिवासी, दलित, अल्पसंख्यक, किसान-मज़दूर की लड़ाई लड़ें, उनके हित में खड़ा हो, विरोध की मुद्रा इख़्तियार करे। भीमा-कोरेगांव कांड तो एक बहाना है। उन्हें डर है कि कहीं वंचित, उत्पीड़ित और हाशिये का समाज एकजुट हो गया तो सत्ता संभालना दूभर हो जाएगा और सत्ता आज बौखला गई है। जनतंत्र की आड़ में फासीवाद का खेल खेलने लगी है।" ■■

नारी विमर्श



हुमा मसीह
दिल्ली

महिला अधिकारों के लिए संघर्ष और धैर्य की मिसाल मरवा कवाकचे

लोकतांत्रिक अधिकारों के लिए धैर्य और शांतिपूर्ण संघर्ष का अद्वितीय उदाहरण तुर्की की महिला मरवा कवाकचे हैं।

तुर्की की एक महिला ने अपने संघर्ष, धैर्य और साहस से दुनिया को यह संदेश दिया है कि अपने लोकतांत्रिक अधिकारों को हासिल करने और बदलाव लाने में कभी कभी एक पूरी पीढ़ी लग जाती है लेकिन उस परिवर्तन के शिखर तक पहुंचने में अपने उसूलों और अपनी विचारधारा का दामन नहीं छोड़ना चाहिए।



हम बात कर हैं तुर्की की महिला फातिमा अबुशहनाब और उनकी मां मरवा कवाकचे के बारे में। तुर्की के राष्ट्रपति की इंटरप्रेटर और इंटरनेशनल रिलेशन स्पेशलिस्ट के रूप में काम करने वाली फातिमा अबुशहनाब की मां मरवा कवाकचे को अपने लोकतांत्रिक मूल्यों और पोशाक की आज़ादी के अधिकार के लिए दो दशकों का लम्बा संघर्ष करना पड़ा।

अपनी काबिलियत की बुनियाद पर तुर्की की प्रेजीडेंसी के एक अहम पद तक पहुंचने वाली फातिमा की मां मरवा कवाकचे को कभी लोकतांत्रिक तरीके से पार्लियामेंट का मेंबर चुन लिए जाने के बाद भी हिजाब पहनने की वजह से निर्वासन का सामना करना पड़ा था। वह 30 वर्ष की आयु में पार्लियामेंट की मेंबर चुनी गई थीं।

सेकुलरिज्म के नाम पर इस्लामी मूल्यों को फॉलो न करने देना एक प्रकार का इस्लामोफोबिया ही है और मरवा इस इस्लामोफोबिया का शिकार उस

वक्त हुई जब हिजाब पहनने की वजह से उन्हें पहले पार्लियामेंट और फिर देश से निष्कासित कर दिया गया।

मरवा कवाकचे 1999 के उस दौर में तुर्की की पार्लियामेंट की मेंबर चुनी गई थी जब तुर्की में मुस्तफा कमाल अतातुर्क के कट्टरपंथी विचार, सेकुलरिज्म के नाम पर स्थापित थे। तुर्की में असिहुष्णता के उस दौर में एक मुस्लिम औरत का अपनी हिजाबी पहचान के साथ आगे बढ़ना संभव नहीं था। नजमुद्दीन अरबकान की इस्लामिक वर्च्यू पार्टी से पार्लियामेंट की मेंबर चुनी जाने के बाद मरवा कवाकचे जब अपना सर ढ़क कर हिजाब पहने हुए अपनी पहचान के साथ शपथ लेने के लिए आगे बढ़ी तो सेकुलरिज्म के नाम पर कट्टरपंथ का अनुसरण करने वाली पार्टी के सदस्य मरवा का हिजाब देखकर भड़क उठे।

बहुमत वाली पार्टियों द्वारा सेक्युलर मूल्यों का उल्लंघन करने के नाम पर मरवा को पार्लियामेंट से निष्कासित कर दिया गया। इतना ही नहीं बल्कि उनकी तुर्की की नागरिकता भी उनसे छीन ली गई जिसकी वजह से उन्हें तुर्की छोड़कर अमेरिका जाकर बसना पड़ा। जून 2001 में वर्च्यू पार्टी को भी प्रतिबंधों का सामना करना पड़ा और मरवा सहित इसके पांच सद्स्यों पर प्रतिबंध लगाए गए। 2007 में मरवा ने यूरोपियन कोर्ट ऑफ ह्यूमन राइट्स में पार्लियामेंट में किए गए उनके बहिष्कार के खिलाफ केस जीता।

अपने अधिकार के लिए लगभग दो दशकों के संघर्ष के बाद 2017 में मरवा कवाकचे को उनकी तुर्की की नागरिकता वापस मिली। आज वो मलेशिया में तुर्की की राजदूत के तौर पर काम करती हैं। मरवा हमेशा से ही तुर्की की कट्टरपंथी सेक्युलर पॉलिसी की आलोचक रही थी। उन्होंने हमेशा पूरी दुनिया में मुस्लिम औरतों के अधिकारों और हिजाब के समर्थन में आवाज़ उठाई। यूरोप और अमेरिका की बड़ी यूनिवर्सिटीज में लेक्चर देने के अलावा मरवा ने 2014 में बार्सिलोना में पार्लियामेंट ऑफ वर्ल्ड रिलीजन को भी संबोधित किया था।

मरवा क़ुरआन की हाफ़िज़ भी हैं। उन्हें पूरा कुरआन कंठस्थ है। उन्होंने पोस्ट ग्रेजुएशन और पीएचडी हार्वर्ड यूनिवर्सिटी से किया। उनकी दो बेटियां हैं फातिमा अबूशहनाब और मरियम कवाकचे। मरवा कवाकचे को दुनिया की 500 सबसे प्रभावशाली मुस्लिम महिलाओं में शामिल किया गया था। इसके अलावा कई बड़े सम्मान मरवा को हासिल हुए। यह सम्मान न सिर्फ एक सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में था बल्कि लोकतांत्रिक अधिकारों की रक्षक, अपनी पहचान की लड़ाई लड़ने और एक मां के तौर पर भी था।

मरवा तुर्की के नामी अखबारों में स्तंभकार के तौर पर भी लिखती रही हैं और एक लेखक के रूप में कई किताबें भी उन्होंने लिखी हैं। 2012 में उनपर एक किताब भी लिखी गई जिसके लेखक रिचर्ड पेरेस थे। 1999 में जब मरवा कवाकचे के हिजाब पर उंगली उठाई गई तब वो अपने उसूलों से डगमगाई नहीं बल्कि उन्होंने दो दशकों तक लंबा संघर्ष किया, उन्होंने न सिर्फ़ अपनी बेटी को काबिल बनाया बल्कि अपने निर्वासन के दौरान पूरी दुनिया में यात्राएं करके लोकतांत्रिक मूल्यों के लिए लड़ाई लड़ी और जागरूकता फैलाई। उन्होंने दुनिया को बताया कि अपनी मर्ज़ी से हिजाब पहनना एक औरत का मूलभूत अधिकार है, जिसे कोई भी सेक्युलरिज़्म के नाम पर छीन नहीं सकता।

नेल्सन मंडेला और महात्मा गांधी की भांति मरवा ने भी धैर्य और साहस के साथ लोकतांत्रिक मूल्यों की रक्षा के लिए लंबी लड़ाई लड़ी। उन्होंने ऐसा अहिंसक आंदोलन किया जो हमें सिखलाता है कि अगर हमारे विचार सही हैं तो हमें उन विचारों की रक्षा के लिए आखरी दम तक लड़ना चाहिए।

अपने अधिकार के लिए लगभग दो दशकों के संघर्ष के बाद 2017 में मरवा कवाकचे को उनकी तुर्की की नागरिकता वापस मिली। आज वो मलेशिया में तुर्की की राजदूत के तौर पर काम करती हैं। मरवा हमेशा से ही तुर्की की कट्टरपंथी सेक्युलर पॉलिसी की आलोचक रही थी। उन्होंने हमेशा पूरी दुनिया में मुस्लिम औरतों के अधिकारों और हिजाब के समर्थन में आवाज़ उठाई।

1999 में जब हिजाब पहनने की वजह से मरवा का बहिष्कार किया गया होगा तब लोगों ने नहीं सोचा होगा कि किसी दिन उसी बहिष्कृत हिजाबी मां की हिजाबी बेटी तुर्की के राष्ट्रपति के साथ उनके इंटरप्रेटर के रूप में काम करेगी।

■■

संस्मरण

बिपिन कुमार शर्मा
मुंबई, महाराष्ट्र

पढ़ने-लिखने के वे ज़माने



जहां से मुझे अपना बचपन याद आता है, लगभग चार-पांच साल से, तब से एक बात बहुत शिद्दत से याद आती है कि मुझे पढ़ने का बहुत शौक हुआ करता था। कुछ समय तक जब गांव की पाठशाला में पढ़ता था, पिताजी जब भी गांव आते तो गीताप्रेस गोरखपुर की कुछ किताबें लिए आते थे, जैसे 'सच्चे और ईमानदार बालक', 'सत्यकाम जाबाल', 'चोखी कहानियां' आदि। उन किताबों के चयन का आधार बालोपयोगी होने के साथ-साथ सस्ता होना भी होता था। उन किताबों की ओर उसी उम्र से सबसे पहले मैं ही लपकता था। यही वजह थी कि कम ही उम्र में मुझे अच्छी तरह पढ़ना आ गया था। दूसरी कक्षा से मैं परिवार सहित शेखपुरा आ गया था। वहां तीन पत्रिकाएं पिताजी ने नियमित कर रखी थीं- नंदन, चंदामामा और गुड़िया। न इससे ज़्यादा और न इससे कम! अपने लिए वे माया, साप्ताहिक हिंदुस्तान, धर्मयुग, दिनमान, रविवार और सारिका लाते थे। इसके अलावा तीन-चार हिंदी अखबार नियमित आते थे, जिनमें जनसत्ता प्रमुख

था। उसके अलावा आज, प्रदीप और आर्यावर्त आता था। बाद में प्रदीप ही शायद हिन्दुस्तान हो गया था।

उन्हीं दिनों स्टेशन पर सायकिल से अखबार और पत्रिका बेचने वाला विष्णु पिताजी के संपर्क में आया। वह हफ्ते में एक-दो दिन पत्रिकाएँ लाने के लिए शेखपुरा से लक्खीसराय जाया करता था। एक ट्रेन से जाता और दूसरी से लौट आता। उतनी देर के लिए पिताजी ने अपने क्वार्टर में उसे साइकिल लगाने की अनुमति दे रखी थी। बदले में उससे मुफ्त में पत्रिकाएं पढ़ने को मिल जाती थीं। विष्णु के संपर्क से हमारा रेंज थोड़ा बढ़ गया था और अब हम उसकी साइकिल के थैले से उन चार-पांच घंटों में मायापुरी, फिल्मी दुनिया, फिल्मी कलियां, स्टारडस्ट, क्रिकेट सम्राट और स्पोर्ट्स स्टार भी निकालकर चाट जाते थे। स्टेशन के ठीक बाहर के गेट पर एक और लड़का किताब बेचता था। उसके पास कुछ अलग तरह की किताबें होती थीं, मसलन किस्सा तोता-मैना, सिंहासन बत्तीसी, बेताल पच्चीसी, दिलबहार शायरी, हसीन शायरी, जीजा-साली की शायरी, रहीम के दोहे, अकबर-बीरबल, शेखचिल्ली की कहानियां आदि। उन दिनों एक और किताब खूब बिकती थी-'सचित्र फिल्मी गीत डायलॉग', जिसका कि मैं दीवाना था।

मरिया आश्रम स्कूल की लाइब्रेरी में सप्ताह में एक दिन एक घंटे की 'क्लास' लगती थी, तो उस दिन 'अमर चित्र-कथा' पर सारी भड़ास निकलती थी। लेकिन मेरी भूख इतने से भी शांत नहीं हो रही थी। मैं कुछ और बेहतर की तलाश में बेचैन रहता था। मजबूरन सारिका, धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, दिनमान, रविवार या अन्य अखबार समझ में न आने के बावजूद पढ़ता-पलटता रहता था।

छठी कक्षा के बाद मेरा एडमिशन शेखपुरा के एक मिडल स्कूल (सरकारी) में करवाया गया जिसे उन दिनों ट्रेनिंग स्कूल कहते थे। वहाँ कुछ मित्रों से मुझे लोट-पोट, सुमन सौरभ और चाचा चौधरी तथा बेताल आदि के कॉमिक्स मिलने लगे। एक नई दुनिया खुली। थोड़ा आगे चलकर पिताजी 'कादम्बिनी' भी लाने लगे थे। मगर मेरा काम इतने से भी नहीं चल रहा था। पिताजी को इससे ज़्यादा मेरे पढ़ने की कतई परवाह नहीं रहती थी, बल्कि घर में मुझे स्कूल की किताबें पढ़ने के लिए अक्सर डाँट पड़ती रहती थी। उन्होंने कभी भी इसमें दिलचस्पी नहीं ली कि मैं कुछ और पढ़ना चाहता हूं और न ही मेरी उस भूख से उन्हें कोई सहानुभूति थी।

मरिया आश्रम स्कूल की लाइब्रेरी में सप्ताह में एक दिन एक घंटे की 'क्लास' लगती थी, तो उस दिन 'अमर चित्र-कथा' पर सारी भड़ास निकलती थी। लेकिन मेरी भूख इतने से भी शांत नहीं हो रही थी। मैं कुछ और बेहतर की तलाश में बेचैन रहता था।

मैट्रिक में मैं शेखपुरा के इस्लामिया हाई स्कूल में पढ़ता था। वहाँ मेरी दोस्ती एक शिवानंद नाम के लड़के से हो गई थी। स्कूल और रेलवे क्वार्टर के बीच में एक जगह उसकी एक किताब की दुकान थी। आम तौर पर उस दुकान पर उसके बड़े भाई या पिताजी बैठते थे, लेकिन कभी-कभी शिवानंद भी बैठा करता था। मैं उसकी दुकान के आसपास चक्कर काटा करता और जब दुकान पर शिवानंद अकेला होता तो उससे मिलने चला जाता। वह अंदर काउंटर पर होता और मैं बाहर रखी बेंच पर। कुछ दिनों बाद मैंने उससे बहुत संकोच से पूछा कि अगर कोई किताब पढ़ने का मन हो और खरीदने के पैसे न हों तो तुम पढ़ने के लिए दे सकते हो? मैं पढ़ने के बाद वैसे का वैसा ही तुम्हें लौटा दूंगा? मुझे लगा था कि उसने बस जिज्ञासावश पूछी है कि `कौन-सी किताब?' किताब का नाम बताते ही उसने वह किताब मेरे हाथ में पकड़ा दी। मैंने उसे फिर से ध्यान दिलाया कि पैसे नहीं हैं मेरे पास! उसने लापरवाही से कहा कि उससे क्या होता है? मैं अहसान से दुहरा हो गया उसके आगे। उसकी दुकान में शिवानी, टैगोर, विवेकानंद और शरतचंद्र का लगभग संपूर्ण साहित्य मौजूद था जिन्हें मैं कुछ ही महीनों में लांघ गया। उसके बड़े भैया भी बहुत उदारतापूर्वक मुझे किताबें दे दिया करते थे।

जब मैं छठी या सातवीं क्लास में पढ़ता था तो मेरी दूसरी बहन की शादी पटना में हुई। उसके कुछ अरसे बाद साल में एक-दो बार पिताजी के साथ पटना जाने का अवसर मिलने लगा। मैं अकेले कहीं बाहर जाने से बहुत घबराता था, बहुत हद तक आज भी घबराता हूँ कि भटक जाऊंगा, सही जगह पहुंच ही नहीं पाऊंगा... पिताजी के साथ दीदी के यहां जाते समय मां पांच-दस रुपए दे देती थी जिसे बहुत जतन से जुगाए जाता था। वापसी में दीदी के परिवार के किसी सदस्य की ओर से भी पांच-दस रुपए की लॉटरी निकल आती। तब पटना से किउल वाली ट्रेन शायद पांच नम्बर प्लेटफ़ार्म से खुलती थी, डीलक्स या विक्रमशिला! कई दफे जाने के बाद मुझे

अंदाज़ा हो गया था कि ट्रेन पंद्रह-बीस मिनट रुकती है। पिताजी जैसे ही ट्रेन में बैठते मैं उन्हें अभी आया कहकर ट्रेन से छलांग लगा देता और बोगी नम्बर को कबड्डी-कबड्डी की तरह रटते हुए एक नम्बर प्लेटफॉर्म की ओर सरपट दौड़ लगा देता। क्षणभर में ओवरब्रिज पार करके पहले 'व्हीलर्स' से निबटता और फिर 'सर्वोदय' से। उस क्षण जितने पैसे होते उतने से एस.सी. बेदी के राजन-इकबाल सीरिज और विवेकानंद साहित्य खरीदकर हवा के वेग से ट्रेन में जा घुसता। हालांकि यह मेरी औकात से बहुत ज़्यादा बड़ा जोखिम था, क्योंकि पिताजी को कुछ बताकर तो आता नहीं था और अगर ट्रेन छूट जाती तो वापस बहन का घर जाने का रास्ता मेरी समझ से बहुत ज़्यादा बाहर था। मगर किताबें तो मुझे इस शर्त पर भी चाहिए होती थीं।

उसी दौरान शेखपुरा स्टेशन के बाहर एक स्टूडियों खुला था, 'आकृति स्टूडियो'। उसके फोटोग्राफर पंकज जी भी जबर्दस्त पढ़ाकू थे। किसी बहाने उनसे मेरा परिचय हो गया था। वे उन दिनों पढ़ने के लिए किताब देने के एवज़ में प्रति किताब पचीस पैसे लेते थे। कुछ समय तक तो मैं महीने में पचीस-पचास पैसे का जुगाड़ करके उनसे भी एक-दो किताबें लेने लगा। चन्द्रकांता संतति, शौकत थानवी, सुरेंद्र मोहन पाठक, गुलशन नंदा, रानू, प्रेम वाजपेयी आदि से मेरा परिचय उसी दौरान हुआ था। एक दिन वे आग्रह करके मेरे कमरे पर आए और उन्हें कुछ किताबें मेरे पास भी नज़र आ गईं, खासकर जैनेंद्र कुमार और भगवती चरण वर्मा का साहित्य। अंतत: यही समझौता हुआ कि पढ़ने के बदले न वे मुझसे पैसे लेंगे और न मैं उनसे। दोनों परस्पर ऐसा व्यवहार रखेंगे जैसा सिकंदर ने पोरस के साथ रखा था। बेशक उनकी लाइब्रेरी मेरी तुलना में बहुत ज़्यादा समृद्ध थी। कुछ अरसे बाद जाने उन्हें क्या फितूर सूझा, वे मुझसे लगातार आग्रह करने लगे कि आप मेरे बारे में कुछ लिखें। बल्कि दोनों एक-दूसरे के बारे में कुछ लिखें। इस तमाशे में मेरी बिल्कुल भी दिलचस्पी नहीं थी। मैं चाहता तो क्या, सोचता तक नहीं था कि कोई मेरे बारे में लिखे! ख़ैर, पहले उन्होंने ही खूब लच्छेदार भाषा में मेरे बारे में चार-पांच पेज लिखकर दिया जिसे बार-बार पढ़ने पर भी समझ में नहीं आ रहा था कि यह 'ले रिया है कि दे रिया है!' मजबूरन मुझे भी उनकी जिद के आगे झुकना पड़ा। उन दिनों तो मैं सोचता भी नहीं था कि कभी कुछ लिखूंगा। लेकिन मेरी भाषा उन दिनों भी काफी साफ थी और तेवर बेधड़क! अपने स्वभाव से मजबूर मैंने उनकी कई कमजोरियों और ओछेपन को साफ-साफ लिख दिया। वे मेरे लिखे पर नाराज़ और गंभीर हो गए। परिणामस्वरूप उनकी लाइब्रेरी की अनेक किताबें मुझसे बेपढ़ी ही रह गईं।

इंटरमीडिएट के ही अंतिम दौर में एक सहपाठी सुनील वर्मा ने साइकिल के कैरियर पर मेरी किताबों के बीच एक दिन एक पतली किताब दबा दी कि घर जाकर देखना। उस समय मुझे कुछ भी समझ नहीं आया था। जब घर आकर उस किताब को खोला तो घबराहट के मारे थर-थर कांपने लग गया। मैं समझ नहीं पा रहा था कि कोई ऐसा कैसे लिख सकता है और इसे कोई छाप कैसे सकता है? अश्लील साहित्य उर्फ़ मस्तराम से मेरा पहला परिचय उसी देवदूत के मार्फत हुआ था।

बाद में जब ग्रेजुएशन के लिए मैं पटना आया तो उस दौर की कहानी पहले 'राजकमल के लालाजी' के बहाने फेसबुक पर लिख ही चुका हूं। पाई-पाई जोड़कर और खूब ठोंक-बजाकर देख लेने के बाद ही किताबें खरीदता था और उसके बाद भी जब कोई किताब अपेक्षा के अनुकूल नहीं निकलती थी तो बहुत ठगा-सा महसूस होता था। उस किताब के खरीदने का अफ़सोस महीनों तक बना रहता था।

बाद में पता नहीं कैसे मैं भी कहानियां-कविताएं या आलोचना-समीक्षा आदि लिखने लगा। साल 2010 में मेरी कहानियों और कविताओं की दोनों किताबें प्रकाशित हुईं। तब से आज तक दस-ग्यारह सालों में मुझे एक दिन के लिए भी यह शिकायत नहीं हुई कि मेरी किताब बिकती नहीं है या लोग मुझे पढ़ते नहीं हैं...मैं ऐसा सोच तक नहीं पाता। उल्टे यह सोच-सोचकर संकोच में गड़ा जाता हूं कि किसी पाठक को मेरी किताब यदि अपेक्षा के अनुकूल नहीं लगी तो मैं उसकी भरपाई कैसे कर पाऊंगा? मैं खुद से ही पूछता रहता हूं कि क्या मैं ऐसा लिख भी पाता हूं कि कोई मुझे पढ़े या किसी को मेरा लिखा खरीदकर पढ़ना चाहिए?

पता नहीं वे लोग कितने महान होते हैं जिन्हें लगता है कि हिंदी के लोग पढ़ते ही नहीं हैं!! कुछ समय से हिंदी में यह विमर्श सर्वाधिक लोकप्रिय हो गया है कि हिंदी के लोग अपढ़ होते हैं, उनमें इतिहास की समझ नहीं होती कि भूगोल की समझ नहीं होती... आदि। अगर कोई मुझे न पढ़े तो इसका मतलब यह कैसे हो गया कि लोग पढ़ते ही नहीं हैं?? बल्कि अपने अनुभव से तो मैं कह सकता हूँ कि हिंदी के लोग बहुत ठोक-बजाकर परखने के बाद ही किसी को पढ़ते हैं। वे उसी को पढ़ते हैं जो पढ़े जाने योग्य होता है। कभी-कभी तो मैं यह भी सोचता हूं कि कभी मेरे पास पैसे हुए तो मैं अपनी सारी किताबों पर यह छपवा दूंगा कि "अगर आपको मेरी किताब निराश करती है तो उसकी कीमत मुझसे प्राप्त करें...।" ■■

उसने (अल्लाह) ने तुम्हारे
लिए दीन का वही तरीक़ा मुक़र्रर
किया है जिसका हुक्म उसने नूह को दिया था
और जिसे (ऐ मुहम्मद सल्ल.) अब तुम्हारी ओर
हमने वह्य के ज़रिये से भेजा है और जिसकी
हिदायत हम इबराहीम और मूसा और ईसा को दे
चुके हैं, इस ताकीद के साथ कि क़ायम
करो इस दीन को और इसमें विभाजित
न हो जाओ। ।
(कुरआन)

DR. RIYAZ AHMED
(NAGPUR)

अध्ययन चर्चा



ख़ान इक़बाल
जयपुर, राजस्थान

वैधानिक गल्प या भारतीय यथार्थ

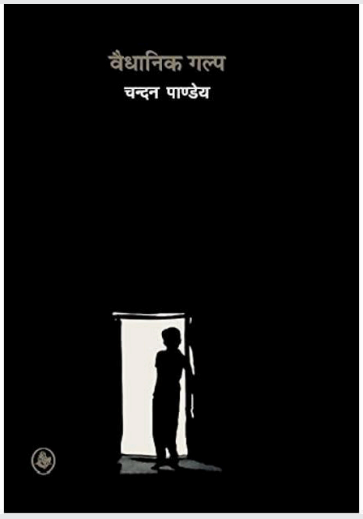

गल्प शब्द के अर्थ का "एहसास" तो मुझे पहले से था परन्तु जब यह शब्द किसी उपन्यास के नाम का हिस्सा बन जाए तो इसके शाब्दिक अर्थ का जानना ज़रूरी हो जाता है।

गूगल के शब्दकोष से पता चला कि इसका निकटतम पर्यायवाची होता है "मिथ्या"।

चंदन पांडेय का उपन्यास "वैधानिक गल्प" भारतीय समाज की दिन-ब-दिन बढ़ती हिंसक प्रवृत्ति को तो दिखाता ही है साथ ही उससे अधिक वह एक धर्म विशेष के शोषण की सामाजिक आम सहमति और उसमें शामिल सरकारी तंत्र और उनके साथ राजनीतिक जुगलबंदियों के काले यथार्थ को सामने लाता है।

उपन्यास लव-जिहाद और उससे पनपे पूर्वाग्रहों को एक कहानी में समेटता है। हो सकता है एक उपन्यास के तौर पर पाठकों को कथा अधूरी लगे परन्तु विषय-वस्तु के एतबार से यह उपन्यास पूर्ण है।

चंदन पाण्डेय एक जमे हुए कथाकार के तौर पर लव-जिहाद और उससे पनपे सामाजिक, प्रशासनिक और राजनीतिक द्वेष के घातक प्रपंचों का एक-एक धागा खोलने में सफल रहे हैं।

उपन्यास पढ़ते हुए आपको ऐसा एहसास होगा जैसे आप ख़ुद इस कहानी का हिस्सा बन गए हों। कहानी लिखने का अन्दाज़ अंत तक बांधे रखता है।

उपन्यास के सारे किरदार हिन्दू हैं दो को छोड़कर और ये दो मुस्लिम पुरुष हैं, दोनों ही प्रेमी हैं और एक जो पति है, लापता हो गया है। कहानी का आरम्भ यहीं से होता है। फिर सरकारी तंत्र कैसे

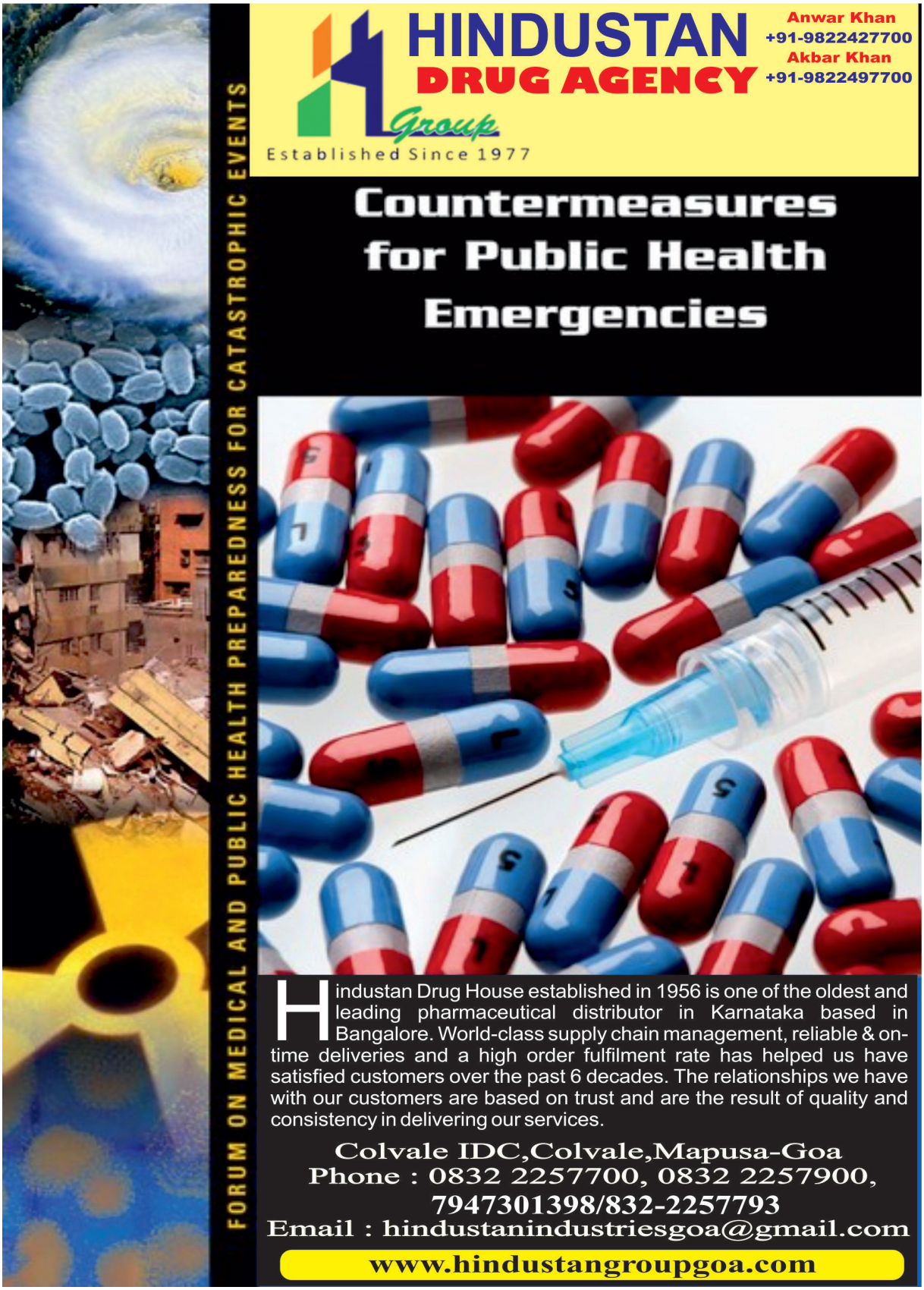
FORUM ON MEDICAL AND PUBLIC HEALTH PREPAREDNESS FOR CATASTROPHIC EVENTS
HINDUSTAN
DRUG AGENCY
Group
Established Since 1977
Anwar Khan
+91-9822427700
Akbar Khan
+91-9822497700
Countermeasures for Public Health Emergencies
Hindustan Drug House established in 1956 is one of the oldest and leading pharmaceutical distributor in Karnataka based in Bangalore. World-class supply chain management, reliable & on-time deliveries and a high order fulfilment rate has helped us have satisfied customers over the past 6 decades. The relationships we have with our customers are based on trust and are the result of quality and consistency in delivering our services.
Colvale IDC,Colvale,Mapusa-Goa
Phone : 0832 2257700, 0832 2257900,
7947301398/832-2257793
Email : hindustanindustriesgoa@gmail.com
www.hindustangroupgoa.com

बड़ी आसानी से पूरे मामले को लव-जिहाद का जामा पहना देता है, उसका कसीला वर्णन है।

इस सरकारी तंत्र में सब भागीदार हैं राजनेता से लेकर मीडिया और कथित प्रबुद्धजन तक। इस उपन्यास को पढ़ते हुए एक बात और समझ में आती है कि गांव-देहातों में इस तरह के प्रॉपगैंडा और सांप्रदायिक विचार बहुत तीव्रता से फैल रहे हैं, शायद उसका कारण अतिसुलभ इंटरनेट हो सकता है और उसके ऊपर अनपढ़ माहौल का होना भी। कहानी में मीडिया लगभग एक अपराधी बनकर सामने आता है। यह बताया गया है कि मीडिया किसी आम-सी दिखने वाली प्रेम कहानी या वैवाहिक संबंध को कैसे सांप्रदायिकता का रंग देकर समाज में धार्मिक उन्माद की आग को जान-बूझकर हवा दे रहा है।

ऐसा लगता है जैसे पत्रकारिता का एक मात्र उद्देश्य समाज में वैमनस्यता का वातावरण पैदा करना ही हो। उपन्यास साथ-साथ समाज में महिला होने के अस्तित्व के संघर्ष पर भी भरी निगाह डालता है।

लेखक का घटनाओं और लम्हों के मध्य लिखे गए संदर्भ दिमाग़ पर छाप छोड़ देते हैं! जैसे–"उसके कन्धे के स्पर्श से मेरे भीतर एक आकांक्षा ने जन्म लिया कि काश! इस कातर स्पर्श के ज़रिए मैं उसकी त्वचा के भीतर समा जाता। ऐसी गुंजाइश होती कि हम अपनी त्वचा बदल लेते। काश ऐसा होता। ऐसा होता तो मैं उसके भीतर जाकर देख पाता कि कौन-सा दुःख सर्वाधिक साल रहा।... लेकिन स्पर्श की सीमा है, वो कायांतरण में रत्ती भर भी मदद नहीं करती।"

चन्दन पांडेय का यह उपन्यास इसलिए भी पढ़ा जाना चाहिए ताकि फ़ेक न्यूज़ के इस घातक युग में झूठ हमारे व्यक्तित्व पर हावी हो जाए उससे पहले ही यथार्थ का सामना कर लेना ज़रूरी हो जाता है।

यह उपन्यास उसकी विषयवस्तु को उसकी जड़ों की हद तक न सिर्फ़ समझाता है, बल्कि यह भी बताता है कि "लव जिहाद" जैसे आख्यान घिनौने राजनीतिक उद्देश्यों के लिए गढ़े गए झूठ हैं जिन्हें "वैधानिक गल्प" कहा जाए तो बेहतर है! ■■

कविता

उसामा हमीद
एएमयू, यूपी

"और हमने पानी से जीवन को पैदा किया"*
बहती नदियां सभ्यताओं की जननी हुईं,
और पानी में दफ़्न पुराने शहर,
आदमी के अस्तित्व के रहस्यों के संग्रह बने।
पानी पर नक़्श है अनंत की आत्मकथा
धरती का आंसू और आसमान का पसीना,
सुबह-शाम पानी पर बहता है सूरज का रक्त
और रात उतर आते हैं पानी पर लाखों सितारे।
नदियों के तट पर बनती-बिगड़ती रही हैं
अमर प्रेम कथाएं और महान युद्ध
नदियों किनारे बहाते रहे हैं ख़ून के समंदर,
पानी की कोख में जमा हैं फेंकी हुई किताबों के वाक़ियात।
पानी को ही चीर कर निकला था मूसा का गिरोह
और पानी में ही मिट गया था एक फ़िरऔन,
दजला और फ़ुरात के दो-आबे में उठा था पहला आदमी
और इसी पानी पर बहती जा रही है आदमी की देह।
लेकिन फिर इसी पानी से उगेगा एक वृक्ष
फिर इसी पानी से उठेगा एक मेघ
फिर इसी पानी पर तैरेगी एक नांव
फिर इसी पानी में डूबेगा तुम्हारा अहंकार।

*क़ुरआन, 21:30

انجمن ترقی اردو جھارکھنڈ

اردو زبان اور تعلیم کے تحفظ و بقا پر خصوصی توجہ دیں

ایک اہم اپیل

۱۔اردو کی مادری زبان کی حیثیت سے تعلیم وتدریس پر خصوصی توجہ دیتے ہوئے اپنے بچوں اور بچیوں کو لازماً اردو لکھنا، پڑھنا، سکھائیں، اسے گھر گھر رائج کریں اور انفرادی اور اجتماعی دونوں سطحوں پر اس کا بہ ہرصورت نظم کریں۔اشد ضروری ہے کہ ہر محلے اور ٹولے میں اردو کے آزاد مکاتب قائم کیے جائیں اور صاحب استطاعت افراد کے تعاون سے اردو اور اس کے ساتھ دینیات کی مفت تعلیم کے انتظام کو یقینی بنائیں۔

۲۔اپنی رہائش گاہ پر نام کی تختی اور دکان کے سائن بورڈ اردو میں بھی لگائیں۔

۳۔شادی بیاہ اور دیگر تمام تقریبات کے دعوت نامے اردو میں لازماً جاری کریں۔

۴۔اردو جھارکھنڈ کی دوسری سرکاری زبان ہے۔لہذا سرکاری محکموں اور دفتروں میں عرضیاں اور درخواستیں ضرور بالضرور اردو میں دیں۔

۵۔اپنے اداروں اور تنظیموں سے متعلق اعلانات اور اشتہارات اردو میں التزماً شائع کرائیں اور اس کو اولیت دیں۔

۶۔اپنے پسندیدہ اردو اخبارات اور اچھے اور صحت مند اردو رسالے اور کتابیں برابر مطالعے میں رکھیں اور انہیں اپنی حیثیت اور اہلیت کے مطابق خرید کر پڑھنے پر توجہ دیں۔اپنے بچوں کو بھی ان کے لیے شائع ہونے والے صاف ستھرے رسائل فراہم کریں اور ان سے استفادے کا موقع دیں۔

۷۔اردو کے جن اسکولوں میں اردو کی ابتدائی درسی کتابیں حکومت کے ذریعہ فراہم نہیں کی جاتی ہیں وہاں اردو کی تدریس کا انتظام کرنے اور اسے جاری رکھنے کی کوشش کریں۔

۸۔اردو کے جو سرکاری نیز غیر سرکاری اسکول اردو میں درسی کتابوں کے فراہم نہ کیے جانے کی وجہ سے ہندی میڈیم اسکول میں تبدیل ہوتے جارہے ہیں ان کی اردو ذریعہ تعلیم کے اسکول کی حیثیت سے پہچان بحال کرنے اور قائم رکھنے پر توجہ دیں۔

۹۔مادری زبان میں لازمی ابتدائی تعلیم کے بنیادی آئینی حق (A 350) کے تحت اردو سکولوں میں پہلے سے آٹھویں درجے تک اردو کی تعلیم کا کلی طور پر نظم کرنے اور اسے ذریعہ تعلیم وامتحان کی حیثیت سے سکنڈری اور انٹر (2+) کی سطح تک جاری رکھ کر اردو تعلیم کے نظام کی بنیاد مستحکم کرنے پر توجہ دی جائے۔

۱۰۔اردو اسکولوں کی انتظامیہ، معلمین اور انجمن ترقی اردو سے اس سلسلے میں خصوصی تعاون اور ان کی رہنمائی حاصل کی جاسکتی ہے۔

منجانب عہدہ داران واراکین انجمن ترقی اردو، جھارکھنڈ

आख़िरी पन्ना

बशर करीम
आरा, बिहार



ईश्वर का अंतिम उपदेश : एक साहित्यिक एवं दार्शनिक चमत्कार

इसमें कोई दो राय नहीं है कि क़ुरआन सीख/नसीहत/उपदेश हासिल करने के लिए बहुत ही आसान किताब है। ये बात ईश्वर ख़ुद क़ुरआन में कहता है कि "हमने इसे सीख हासिल करने के लिए अत्यंत उपयुक्त बनाया है बस सच्चे मन से सीख हासिल करने वाला होना चाहिए।" वहीं दूसरी ओर क़ुरआन बौद्धिक और दार्शनिक स्तर पर बहुत गहरी किताब भी है, उस गहराई को प्राप्त करना तथा इसके ज्ञान की गहनता तक पहुंचना हर किसी के बस की बात नहीं है।

इसकी वजह यह है कि क़ुरआन की भाषा-शैली क्लासिकल अरेबिक साहित्यों के दरमियान एक चमत्कार की हैसियत रखती है। बहुत कम शब्दों में बहुत गहरी बात कह जाना/समंदर को मटकी में बंद कर देना क़ुरआन का साहित्यिक चमत्कार है। क़ुरआन की भाषा संबोधन की भाषा है। ईश्वर कभी अपने रसूल से संबोधन कर रहा होता है कि जाओ अपनी क़ौम को मेरा संदेश दे दो, मेरी बड़ाई का ऐलान करो और मेरा साझी बनाने के सम्बंध में उन्हें ख़बरदार कर दो, तो कहीं ईश्वर कभी उस क़ौम के लोगों से संबोधन करता है, कभी आम लोगों से संबोधित होता है, तो कभी क़ौम के लीडर्स से, हर तरह की दलीलों के साथ लोगों को समझाने की कोशिश करता है।'

तुम्हें क्या हो गया है कि मेरे भेजे हुए इस रसूल पर ईमान नहीं ला रहे हो। ये तुम्हारे जैसा ही एक इंसान है, बरसों तुम्हारे बीच रहा है, तुम इसे सच्चा, अच्छा और अमानतदार जानते हो, इसे मैंने तुम्हारी क़ौम से ही चुना है और जबकि ये रसूल तुम्हें मेरी निशानियां भी दिखा रहा है, तुम्हारे दिल इसकी दलीलों को मान भी रहे हैं फिर भी तुम हठधर्मी कर रहे हो, ये तो तुम्हारा भला चाहता है, लेकिन तुम इसकी जान के दुश्मन बने हुए हो।'

ये सारे संबोधन चरम साहित्यिक शैली में आध्यात्मिक, ऐतिहासिक, दार्शनिक तथा बौद्धिक तथ्यों एवं तर्कों पर आधारित हैं। जिस समय ये किताब थोड़े-थोड़े अन्तराल पर अवतरित हो रही थी उस समय अरब जगत के बड़े- बड़े साहित्यकारों ने अपने दांतों तले उंगलियां दबा ली थीं। इसकी

Literary Climax के आगे सबने अपने क़लम तोड़ डाले थे, उनके बस की बात नहीं थी कि क़ुरआन की भाषा शैली को चुनौती देते हुए कोई बड़ा साहित्य गढ़ सकें जो ईश्वरीय उपदेश के तुल्य हो।

इसकी साहित्यिक सुंदरता ही उनके सामने इस बात की सबसे बड़ी दलील थी कि वो इसे ईश्वरीय ग्रंथ मानें और हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) को ईश्वर का दूत (messenger) क्योंकि वो जानते थे कि ऐसा साहित्य लिख देना किसी इंसान के बस की बात हो ही नहीं सकती और फिर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) एक ऐसे इंसान जिनकी ज़ुबान पर इसके पहले इस तरह का कोई

ईश्वर कभी अपने रसूल से संबोधन कर रहा होता है कि जाओ अपनी क़ौम को मेरा संदेश दे दो, मेरी बड़ाई का ऐलान करो और मेरा साझी बनाने के सम्बंध में उन्हें ख़बरदार कर दो।

कलाम कभी जारी नहीं हुआ था। उनके साथ चालीस साल का लंबा जीवन व्यतीत करने वाली उनकी क़ौम, उनके अपने, दोस्तों, पड़ोसियों इन सारे लोगों ने ऐसा कलाम पहले कभी भी उनकी ज़ुबान से नहीं सुना था। उन्होंने न कभी ऐसे उपदेश दिए थे, न इस तरह कभी अपनी क़ौम को ख़बरदार किया था, न उनका ख़ुद साहित्य जगत से कोई रिश्ता-नाता था, न वो उस दौर के पढ़ने-लिखने की कला के ज़्यादा ज्ञानी ही थे, न पूरी ज़िंदगी कभी भी वो साहित्य सीखने-लिखने-पढ़ने तथा समझने की किसी क्रमागत (evolution) प्रक्रिया से गुज़रे थे। ये सब कुछ बिल्कुल अचानक से हो रहा था, ईश्वर का ये अंतिम उपदेश सरासर एक चमत्कार ही था, एक साहित्यिक तथा उपदेशिक चमत्कार।

■■



Welcome To
GREEN CITY BUILDERS



Green City Builders is a Nagpur entity the centrally located city in India, with connectivity to the four corners of the country. Zakir Khan's thrust lies with the fact that since much before the present development and advancement taking shape in Nagpur ; what with the Multimodal International Hub at Nagpur (MIHAN) Special Economic Zone (SEZ) ;of almost the size of Nagpur itself, Expansion and standardization of the existing Airport to International quality and performance, the onset of the famous "SAHARA" groups city home project, he could sense almost the same transformation in the fortunes of the city through his inquisitive intelligence and a will to usher in the same values of advancement through his Green City Builders, for his beloved orange city of Nagpur.

OFFICE ADDRESS

21, "Aman's Glory", Jafar Nagar, Main Road, Nagpur - 440013.
Ph: 0712-2587860, 2587862
Email: business@greencitybuildcons.com

KANTI Monthly, New Delhi
AUGUST 2021
Posted on 20-21 July 2021
Published on 18 July 2021
Posted Delhi RMS Delhi-110006

RNI 53372/91
DL(S)-01/3147/2021-2023
LICENSED TO POST WITHOUT PREPAYMENT
License No. U(SE)-73/2021-2023
Total Pages with Cover: 52

ALMANAR SOCIAL SERVICE

MEDICAL WING

Jharna Road, Near Eidgah Maidan, Azad Nagar, Mango Jamshedpur, Ph. : 9955127184, 9431961077

Regn. No. 61/09 & Recipient of 12A, 80G of IT Act

in Association with **D.M. Foundation Human Welfare Foundation**







Our Camp Graph
(2012 to 2018)

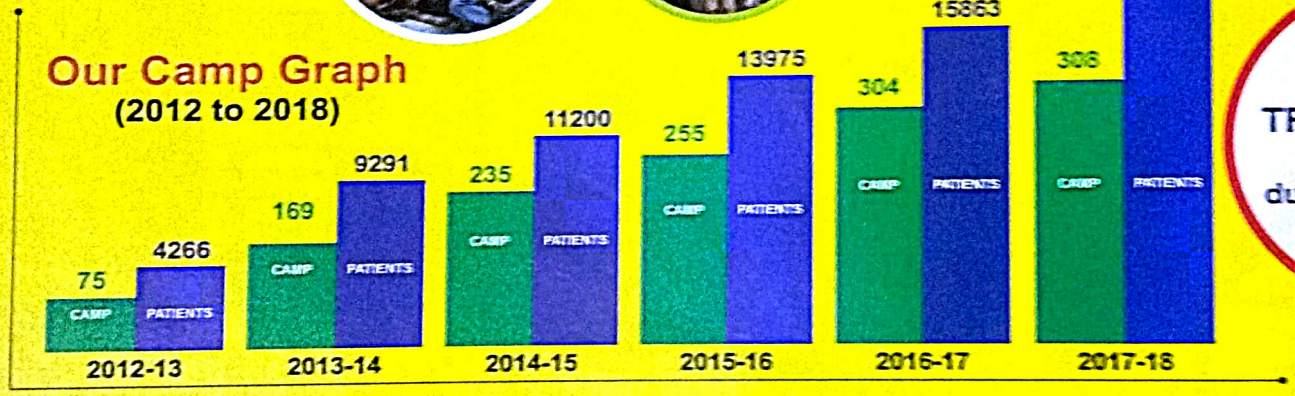

No. of FREE TREATMENT 19788 during the year 2017-18



Our Eye Camp Graph
(2016 to 2018)

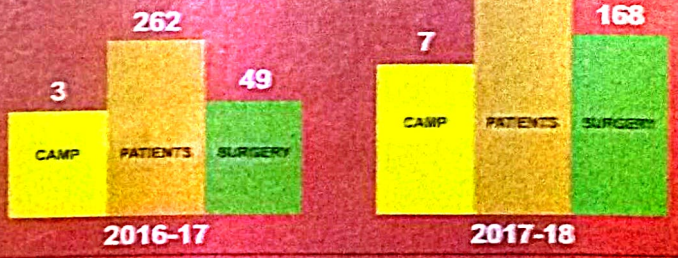



No. of FREE EYE SURGERY 168 during the year 2017-18

